नगर) की आर्यिका दीक्षा विशाल समारोहपूर्वक वहुत ही धूमधाम से मिती भादवा सुदी ६ को सम्पन्न हुई। अध्ययन अध्यापन करते हुए सघ मे आपका शातिपूर्वक काल व्यतीत हो रहा है।

जैसो आपकी आरम्भ से ही स्व पर कल्याण की भावना रही है। तदनुसार आपने अपने १५ वर्ष के दीक्षा काल मे उल्लेखनीय कार्य किए। आपके हर चातुर्मासो एव विहार स्थानो मे ऐसी विशेषताए रही है जो वहा वालो को चिरस्मरणीय रही है तथा रहेगी। आपने बहुतो को ससार समुद्र में डूबने से बचाया। आर्यिका पद्मावतोजी, आर्यिका जिनमतीजो, आ. श्री आदिमतीजी, आ श्री श्रेष्ठमतीजो, आ. श्रो अभयमतीजी तथा आ. श्री जयमतीजो को आपने ही सद्प्रेरणा देकर सन्मार्ग पर लगाया। दीक्षा ही नही दिलाई, साधारण ज्ञान को प्राप्त श्री जिनमतीजी को पढाकर आज शास्त्री से भी ऊपर का ज्ञान कराकर समकक्ष का बना लिया। पू. श्री वर्धमानसागरजी महाराज आप ही की देन हैं। १९ वर्ष के छोटे से इस बालक को त्रिलोक पूज्य पद पर आसोन कराकर स्वय भी नत-मस्तक हुई। उदयपुर के वीर बालक 'सुरेश' (वर्तमान, मुनि श्री सभवसागरजो) को ७ वी प्रतिमा के व्रत स्थान देकर आ. श्री शिवसागरजी से दीक्षा लेने हेतु प्रेरणा-पूर्वक भेजा। जो आज रत्न बन गये। कलकत्ता की कु० सुशीला (पू श्री श्रुतसागरजी महाराज को सुपुत्री) तथा

श्रवणबेलगोल की कु० शीला जिन्हे गृह विरक्त कराकर आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत तथा २ प्रतिमा दिलाकर एव बासवाड़ा की कु० कला (सुपुत्री श्री पन्नालालजी तराटी) इन सभी को अपने अनुशासन में रखकर अध्ययन भी करा रही है। मुझ पर भी आपकी कृपा दृष्टि है जो कि श्री शिवसागरजी के सघ में रहने तथा आपसे अध्ययन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। पू. श्री १०८ अजितसागरजी महाराज को भी आप ही की सद्प्रेरणाएं मिली जिससे वे आज जगत के गुरु होकर कल्याण के मार्ग पर अग्रसर है।

लगभग ८ वर्ष पूर्व (अजमेर) से संग्रहणी के रोग से ग्रसित है जिससे दिन में ७-८ बार दस्न होते है। जिस पर आहार भी अत्यन्त सयमपूर्ण, केवल दो रस (घृत एवं दुग्ध) तथा दो धान्य उसमें भी ५-६ वर्षों से तो केवल चावल ही लेती है। ऐसी स्थिति मे अत्यन्त जीर्ण शरीर होते हुए भी दिन में थोड़ा भी व्यर्थ बैठना आपको सुहाता नही है। सुबह से शामतक बराबर अध्ययन-अध्यापन मे जुटी रहती है। हालाकि उपवास तहुव कम करती है परन्तु ऐसा शायद ही कोई सप्ताह जाता होगा जिससे एक-दो अन्तराय न आती हो। थोड़े से दीक्षित जीवन काल में न्याय, व्याकरण, छद, अलंकार तथा सस्कृत के उच्चतम ज्ञान के साथ प्राकृत के अलावा कन्नड़ भाषा की भी अच्छी जानकार है। सस्कृत तथा कन्नड़ भाषा में धाराप्रवाह प्रवचन करने में आप कुशल है। आपके द्वारा रचित कई हिन्दी

[illegible] तथा कानड़ी रचनाएं पुस्तक रूप में प्रकाशित हो चुकी है तथा हो रही है।

हम भगवान जिनेन्द्र देव से प्रार्थना करते है कि आप पूर्ण स्वस्थ होकर दीर्घायु होते हुए समस्त जीवो को कल्याण कामार्ग बताते रहे पुनः पुनः चरणार्विन्द में सविनय नमोस्तु-नमोस्तु-नमोस्तु।

बाल मुनि की आध्यात्मिक जीवन झांकी

मुक्ति पथ का पथिक............

(स्व० कविवर श्री पुष्पेंदुजी की 'बसत बहार' पुस्तक से उघृत)

मुक्तिपथ का पथिक ध्यान में लीन है
- चूमने को चरण साधनाए चली,
भारती ने सजायी अमर आरती
शुचि यशोगान करती ऋचाए चली।
जड़ प्रकृति ने कहा—यह अरे कौन है
जो परिधि तोड़ता आज व्यवधान की,
शृङ्खलाएं जिसे बाध पाती नही
मान-अपमान अभिशाप वरदान की।
सकटो को चुनौति दिये जा रहा
यह तपस्वो तरुण एक त्यागी बना,
और आकर्षणों को तिरस्कृत किए
कौन है मौन यह वीतरागी बना।
ध्यान के सिन्धु को सोखने के लिए
वेग के संकटो की शिलाएं चली।
मुक्तिपथ का पथिक ध्यान में लीन है
चूमने को चरण साधनाएं चलो।
वस्त्र-भूषण अलकार को त्यागकर

जिसने अम्बर दिशाओं का धारण किया,
वह दिगम्बर महामुनि तपोनिधि सरल
मोहमय भावना का निवारण किया ।
उस महावीर के ध्यान की ढाल से
तीक्ष्णतम काम के बाण कुण्ठित हुए,
और ऋतुराज के मदभरे उपकरण
व्यर्थ से सिद्ध हो भू विलुंठित हुए ।
आत्म अनुभूति की शुची सुधाधार से
हारकर विषमयी वासनाएं चलीं
भूख की, प्यास की, शीत की, घाम की
हस्तियां हारकर गिड़गिड़ाने लगी
विष भरी क्रूर हिंसक पशु टोलियां
आक्रमण कर थकी सिर झुकाने लगीं ।
उत्तरोत्तर विकासोन्मुखी वृत्ति का
स्पर्श पाकर गरल भी सरल हो गया ।
घोर तमतोम से युक्त वातावरण
शारदी ज्योत्सना साधवल हो गया ।
साधना सूर्य की ज्योति के पुंज से
लुप्त होती नियति की निशाएं चलीं,
मुक्तिपथ का पथिक ध्यान मे लीन है
चूमने को चरण अर्चनाएं चली ।
त्याग की आग में राग ईंधन बना

आत्म अनुराग कचन निखरने लगा,
रूप सत्यं, शिवं, सुन्दर का स्वयं
मन क्षितिज पर उषा सा उभरने लगा।
यह अखिल लोक आलोक से भर गया
दीप्ति ऐसी जगी विश्व कल्याण की,
भावना एक नूतन प्रवाहित हुई
विश्व के प्राण में आत्म कल्याण की।
पर विजय गीत गाती हुई लोक में
सत्य श्रद्धामयी वन्दनाए चलीं,
मुक्तिपथ का पथिक ध्यान में लीन है
चूमने को चरण अर्चनाएं चली।

विशेष—

इस पुस्तक के प्रारंभ में दी गई 'सिद्ध क्षेत्र वदना' भगवान महावीर स्वामी की 'निर्वाणबेला' में प्रति दिन पढने का महत्व रखती है। इसी कारण अन्यत्र इसका नाम 'उषा वदना' भी दिया गया है। यह प्रभाती रूप स्तुति 'उषा वदना' के नाम से स्वतत्र रूप से पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुकी है।

'वीर निर्वाण बेला' का तात्पर्य है 'उषा काल'

किंचित् ललाई लिये हुए प्रभातोन्मुख समय को 'उषा काल' कहते है। इसे सरस्वतीबेला एवं ब्राह्म मुहर्त भी कहते है। हमारे देश मे हर प्रातो मे प्राय. इस समय प्रभाती स्तोत्र आदि पाठ पढ़ने की आम प्रथा है।

दक्षिण प्रान्त में कन्नड तथा मराठी में भव्य जीवों को जाग्रत करने वाले मधुर एंव ललित पद वाले कई प्रकार के सुप्रभात स्तोत्र देखे जाते है। तदनुरूप ही यह वदना भी है।

प्राय: रात्रि में सुप्त बालक प्रात: जगाने पर रोने लग जाते है। जिससे उठते ही उस रुदन के कारण वह दिन अमागलिक सा हो जाता है। यदि माता पिता एव पारिवारिक जन—

उठो भव्य खिल रही है उषा, तीर्थ वदना स्तवन करो।
आर्तरौद्र दुर्ध्यान छोड़कर, श्री जिनवर का ध्यान करो।।

इन उपरोक्त पक्तियो से सुप्त जनो को जगावेगे तो दिवस मंगलमय होगा।

यदि आश्रम एवं गुरुकुल आदि स्थानों पर भी इस वदना को 'प्रभाती वदना' के स्थान पर उपयोग में लावेगे तो सचमुच में वहा का सम्पूर्ण दैनिक वातावरण परम सुखद एव मागलिक होगा।

बिम्ब स्थापित करवाकर 'चूलगिरी पार्श्वनाथ' क्षेत्र के नाम से प्रख्यात करके उसकी महिमा को और अधिक गौरवान्वित किया है। इसी श्रृंखला मे 'भक्ति के माहात्म्य' की एक और स्वर्णिम कड़ी जुड गई है।

जगत पू. आचार्य श्रीशातिसागरजी, आ श्री वीरसागरजी आ. श्री शिवसागरजी, सिंहतुल्य पराक्रमी श्री चन्द्रसागरजी जैसे उग्र तपस्वी, उत्कृष्ट निर्दोष चारित्र तथा दृढ सम्यकत्व को धारण करने वाले उन महान गुरुओ की परम्परा में इन नव-दीक्षित बाल मुनिराज ने 'भक्ति माहात्म्य' के ज्वलन्त उदाहरण से इन ऋषियो की गुणगौरव गरीमा में चार चाद लगा दिये।

आज के इस भौतिकवादी युग मे जबकि मानव मानव को निगल जाना चाहता है। मानव दानव बन रहा है। अधिकांश व्यक्ति किसी भी प्रकार के सयम को अपनाने में लज्जा एव कष्ट का अनुभव करते है। त्याग को अंध रूढी कहते है। इसी के साथ दूसरी तरफ अध्यात्मवाद की झूठी दुहाई देने वाले, कामोभोगी-विषयाभिलाषी पुरुष, आगाम से पराङ्मुख होकर उन शिथिलजनो को कल्याणकारी दिगम्बर गुरुओ के प्रति अश्रद्धा उत्पन्न कराकर उन्हे रसातल पहुँचा रहे है।

ऐसे विकट समय में भी हमारे महाभाग से वर्तमान आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज जैसे मुनि पुंगव ससारी प्राणियो को सच्चे सुख की प्राप्ति का मार्ग बतला रहे है।

"गर्भाधान क्रिया न्यूनौ पितरौहि गुरुर्नृणाम् ।" की उक्त कहावत को चरितार्थ करने वाली जगत माता ज्ञानमतीजी जैसी साध्विया हम लोगो के सौभाग्य से विद्यमान है जो अपने शिष्यो को लाड़-प्यार पूर्वक सद्प्रेरणा देते हुए अत्यन्त अल्प वय मे ही बिना पूर्वाभ्यास के भी दृढ़तापूर्वक मुनि दीक्षा दिलाकर ही सतुष्ट होती हैं । उन्ही में से हमारे पू. श्री वर्धमान-सागरजी भी हैं जो उनके मार्गदर्शन में चलने के फलस्वरूप ही आज निर्दोष चारित्र का पालन करते हुए हमें दर्शन दे रहे है ।

"धन्य है यह माता और धन्य है यह त्याग ।"

आज तो किञ्चित सामान्य व्याधि के आने पर ही सारा आध्यात्मवाद पलायमान हो जाता है । शीघ्र हीं डाक्टर की शरण ग्रहणकर, भक्षाभक्ष का विचार न कर अशुद्ध औषधियों का सेवन कर अपने को धर्मात्मा कहलाने का दु:स्साहस करते है । जबकि आख ही जीवन का सब कुछ है तो भी उसका तथा जीवन का मोह छोड़कर ३ माह के नवदीक्षित मुनि श्री वर्धमान-सागरजी ने सल्लेखना के लिए कटिबद्ध होकर जिनदेव के चरणों की शरण ग्रहण की ।

अब भी महान तकलीफों के आने पर भी दृढतापूर्वक एवं धैर्यपूर्वक अटूट श्रद्धायुक्त 'जिन भक्ति' से ओतप्रोत होकर अपने सयम की रक्षा मे पूर्ण सजग एव सावधान रहते हुए

मौनस्थ जिनमुद्रा के द्वारा ही मोक्ष का पद प्रदर्शित कर रहे हैं।

प्रस्तुत पुस्तक में दी गई 'शांति भक्ति' की हिन्दी (पद्य मे) तथा श्री वर्धमानसागरजी की स्तुति जयपुर निवासी वयोवृद्ध विद्वान पं. श्री इद्रलालजी शास्त्री ने अत्यन्त रुग्णावस्था तथा अशक्तता होते हुए भी भक्तिवश रची है। जीवन चरित्रो लिखने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है। प पू. स्वर्गीय आ. श्री शिवसागरजी महाराज के प्रति श्रद्धाजलि, प. पू. १०८ आ श्री धर्मसागरजी महाराज एवं पू. श्री १०८ आ. कल्प श्री श्रुतसागरजी महाराज की स्तुतिया सस्कृत तथा हिन्दी मे सघस्थ परम विदुषी आर्यिक श्री ज्ञानमतीजी माताजी द्वारा रचित है।

पूज्य माताजी स्वय न्याय, काव्य, छद, अलकार, तर्क, व्याकरण, सिद्धातादि विषयों में अधिकार रखती है। सभी विषयों पर उनका अद्वितीय प्रभुत्व है। जैन भूगोल की भी अच्छी जानकार हैं। सस्कृत, हिन्दी तथा कानडी भाषा मे आपकी उत्तमोत्तम काव्य रचनाए प्रायः हर चौमासे में प्रसिद्ध होती रहती है। वैसे स्तुतियों को पढकर ही माताजी की विद्वत्ता का परिचय मिल जाता है।

इस लघु पुस्तक की प्रस्तावना में संघस्थ विद्वान ब्रह्मचारी सहिता सूरी प्रतिष्ठाचार्य श्री सूरजमलजी ने गागर में सागर भरकर पुस्तक की महत्ता को द्वि गुणित कर दिया है।

श्री ब्रह्मचारीजी इस सघ की पूर्व परम्परा से आ०

श्री शांतिसागरजी के समय से ही साधुओं के संपर्क में हैं। आ. श्री वीरसागरजी के समय से तो आप सक्रिय रूप से संघ में रहकर आज तक बराबर संघ व्यवस्था तथा सघ सचालन में कुशलतापूर्वक काल व्यतीत कर रहे हैं।

आपने अनेक पंचकल्याणक प्रतिष्ठाएं, बहुत सी वेदी प्रतिष्ठाएं तथा अनेकानेक मडल विधानादि आगमोक्तरीत्या सम्पन्न कराये है। आप प्रारम्भ से ही साधुओं के प्रति महान भक्तिपूर्वक वात्सल्य भाव रखते हुए श्रद्धानिष्ठ होकर साधुओं की वैय्यावृत्ति में सलग्न हैं।

पुस्तक के प्रारम्भ में दी गई 'सिद्ध क्षेत्र वन्दना' तथा 'शाति भक्ति' का पाठ नित्यप्रति उषा काल की बेला में हृदय से गुंजायमान हो तो सारा दिन मागलिक होगा एव गुरुओ के उज्ज्वल चरित्र का चिंतवन करने से कल्याणकारी पथ प्राप्त होगा।

आचार्य श्री धर्मसागरजी सघस्थ

मोतीचंद जैन, सराफ

(सनावद, मध्यप्रदेश)

विषयानुक्रमणिका

॥ सिद्धक्षेत्र वंदना ॥

उठो भव्य ! खिल रही है उषा, तीर्थ वदना स्तवन करो ।
आर्त रौद्र दुर्ध्यान छोड़कर, श्री जिनवर का ध्यान करो ॥टेक॥
अष्टापद से वृषभदेव जिन, वासुपूज्य चपापुरि से ।
ऊर्जयन्त से श्री नेमीश्वर, मुक्ति गये वदो रुचि से ॥१॥
पावापुरी सरोवर से इस, उषाकाल में श्री महावीर ।
विधुतक्लेश निर्वाण गये है, नमो उन्हे झट हो भवतीर ॥२॥
वीस जिनेश्वर मोक्ष गये है, श्री सम्मेदशिखर गिरिपर ।
और असख्य साधुगण भी, शिव पाई वही नमो सुखकर ॥३॥
ऊर्जयत से नेमिप्रभु प्रद्युम्न, शभु अनिरूद्धादिक ।
कोटि-बहत्तर सातशतक मुनि, सिद्ध हुए है वदो नित ॥४॥
साढे तीन कोटि वरदत्त-वराग, सागरदत्तादिक ।
मुनि तारवर नगर से गये, मोक्ष उन्हे वदो नितप्रति ॥५॥
रामचद्र के दो सुत लाड नृपादिक, पच करोड गिनो ।
पावागिरी शिखर से शिवपुर, गये भक्ति से उन्हे नमो ॥६॥
पाडव तीन द्रविड राजादिक, आठ कोटि मुनि सुरपूजित ।
शत्रु जय गिरि से शिव पायें, नमो सभी को भाव सहित ॥७॥
बलभद्र सप्त यादव नरेंद्र इत्यादिक, आठ कोटि परिमित ।
गजपथा गिरि से शिव पहुँचे, भाव भक्ति से वदो नित ॥८॥
रामहनूमन सुग्रीव गवगवाख्य-नील महानील यति ।
निन्यानवे कोटि मुनि तुंगी-गिरि से शिव गये करो नति ॥९॥
नग अनग कुमर अरु साढे-पाच कोटि परिमित मुनिगण ।
सोनागिरिवर से निर्वाण-गये उन सबको करो नमन ॥१०॥
साढे पच कोटि मुनि दशमुख सुत आदिक रेवातट से ।
मृत्युजीत शिवकाता पाई, नमो सभी को प्रीति से ॥११॥
रेवा नदितट पश्चिम दिश में. कूट सिद्धवर से निर्वाण।
दो चक्री दश 'मदन सार्धत्रय, कोटि साधु को करो प्रणाम ॥१२॥

वडवानी पत्तन से दक्षिण-दिशि मे चूलगिरी ऊपर ।
इंद्रजीत अरु कुंभकर्ण शिवपाई उन्हे नमो भवहर ॥१३॥
पावागिरी शिखर के ऊपर, सुवर्णभद्रादि मुनि चार ।
नदी चेलना तट सन्निध निर्वाण गये वदो सुखकार ॥१४॥
फलहोडीवर ग्राम के पश्चिम-दिश मे द्रोणागिरि परसे ।
गुरुदत्तादि मुनींद्र परम निर्वाण गये वंदो रुचि से ॥१५॥
नागकुमार वालि महावालि-आदिक मुनि अष्टापदसे ।
कर्मनाश शिवनारि वरी, उनको वदो नित भक्ति से ॥१६॥
अचलापुर ईशान दिशा मे, मेढागिरी शिखर ऊपर ।
साढेतीन कोटि मुनिशिवपुर पहुँचे वदों भवभयहर ॥१७॥
वशस्थल वनके पश्चिम दिश कुंथलगिरोमें श्री मुनिराज ।
कुलभूषण अरु देशभूषण शिव गये नमो उनके पादाब्ज ॥१८॥
जसरथ नपसुत अरु कलिग देश मे यतिवर पचशतक ।
कोटि शिलापर कोटि मुनीश्वर मुक्ति गये है नमो सतत ॥१९॥
पार्श्व जिनेश्वर समवसरणमे, वरदत्तादि पच ऋषिराज ।
मुक्ति हुए रेसिंदी गिरोसे उन्हे नमो भव जलधि जहाज ॥२०॥
जंबू वनसे मुक्त हुए अंतिम जंबूस्वामी उनको ।
और अन्य मुनि जहां जहा से, मुक्त हुए वदो सबको ॥२१॥
जिनवर गणधर मुनिगण की, निर्वाण भूमिया सदा नमो ।
पचकल्याणक भूमि तथा, अतिशययुत क्षेत्र सभी प्रणमो ॥२२॥
शालिपिष्ट भी शर्करयुत माधुर्य-स्वादकारी जैसे ।
पुण्यपुरुषके पदरजसे ही, धरा पवित्र हुई वैसे ॥२३॥
त्रिभुवनके मस्तकपर सिद्ध-शिलापर सिद्ध अनतानत ।
नमो नमो त्रिभुवनके सभी—तीर्थको जिससे हो भवअंत ॥२४॥
सिद्धक्षेत्र वदनसे नतानत, जन्मकृत पाप हरो ।
"सम्यग्ज्ञानवती" श्रद्धासे, शीघ्र सिद्ध सुख प्राप्त करो ॥२५॥

शांतिभक्ति:

पूज्यपादाचार्य द्वारा रचित

[हिन्दी पद्यानुवाद सहित]

(१)

न स्नेहाच्छरणं प्रयांति भगवन् पादद्वयं ते प्रजाः
हेतुस्तत्र विचित्रदुःखनिचयः संसार-घोरार्णवः ।
अत्यन्तस्फुरदुग्ररश्मिनिकरव्याकीर्णभूमंडलो,
ग्रैष्मः कारयतीन्दुपादसलिलच्छायानुरागं रविः ॥

+ + + +

आवें चरण के शरण में जन नही कारण स्नेह है,
है किन्तु कारण दु.ख भवका दुःख निधि यह गेह है ।
जब सूर्य से सतप्त होते ग्रीष्मऋतु में जन कभी,
तब चहें शीतल साधनों को चन्द्र छाया सलिल भी ॥

(२)

क्रुद्धाशीर्विषदष्टदुर्जयविषज्वालावलीविक्रमो
विद्याभेषजमंत्रतोयहवनैर्याति प्रशांतिं यथा ।
तद्वत्ते चरणारुणांबुजयुगस्तोत्रोन्मुखानां नृणां,
विघ्नाः कायविनायकाश्च सहसा शाम्यंत्यहो विस्मयः ।

+ + + +

ज्यो क्रुद्ध काले नाग दुर्जय दुष्ट विषसम अनल से,
शांत होते मत्र विद्या हवन औषधि सलिल से ।

त्यो आपके जो चरण कज की स्तुति करे नित चाव से,
उनके सभी तन रोग होते नष्ट भक्ति-प्रभाव से ।।

(३)

संतप्तोत्तमकांचनक्षितिधर श्रीस्पर्धिगौरद्युते !
पुंसां त्वच्चरणप्रणामकरणात्पीडाः प्रयांति क्षयम् ।
उद्यद्भास्करविस्फुरत्करशतव्याघातनिष्कासिता,
नानादेहिविलोचनद्युतिहारा शीघ्रं यथा शर्वरी ।।

\+ + + +

तप्त उत्तम कनकसनिभ काति के धारी प्रभो !
तुम चरण भक्ति प्रसाद पीड़ा नष्ट हो जाती विभो ।
ज्यों उदित होते रवि किरण के जाल से तामसकरी-
सब प्राणियो की नेत्र द्युतिहर नष्ट होती शर्वरी ।।

(४)

त्रैलोक्येश्वरभंगलब्धविजयादत्यंत रौद्रात्मका-
न्नानाजन्मशतांतरेषु पुरतो जीवस्य संसारिणः ।
को वा प्रस्खलतीह केन विधिना, कालोग्रदावानला-
न्न स्याच्चेत्तवपादपद्मयुगलस्तुत्यापगावारणम् ।।

\+ + + +

सब जगत में असुवर्ग के संहार से पाकर विजय,
छोड़ा किसो को भी नही अत्यन्त क्रूर महा प्रलय ।
काल अग्नि कराल भीषण शान्त होता ही नही-
यदि आपकी स्तुतिसरित्का यह स्वच्छजल मिलता नहीं ।

(५)

लोकालोकनिरंतरप्रविततज्ञानैकमूर्ते ! विभो !
नानारत्नपिनद्धदंडरुचिरश्वेतातपत्रत्रय !
त्वत्पादद्वयपूतगीतिरवतः शीघ्रं द्रवन्त्यामया,
दर्पाध्मातमृगेन्द्रभीमनिनदाद्वन्या यथा कुंजराः ॥

\+ \+ \+ \+

हे सर्वलोकालोकज्ञाता ज्ञानमूर्ति महाप्रभो !
छत्र चामर भाविभूषित लोकनायक सद्विभो !
तुमचरण गीति सुपूत स्तुति से नष्ट हों रोगात्तियां,
ज्यों वीर सिंह निनाद को सुन भागती गज पंक्तियाँ ॥

(६)

दिव्यस्त्रीनयनाभिरामविपुलश्रीमेरुचूड़ामणे !
भास्वद्बालदिवाकरद्युतिहर ! प्राणीष्टभामंडल !
अव्याबाधमचिन्त्यसारमतुलं त्यक्तोपमं शाश्वतं,
सौख्यं त्वच्चरणारविन्दयुगलस्तुत्यैव संप्राप्यते ॥

\+ \+ \+ \+

देवागना अभिराम लोचन अचल मेरु महामणी,
काति भामडल मनोहर बालरविद्युतिहारिणी ।
तुम चरणयुग की नित्य स्तुति से अमल अतुल अचिन्त्य भी,
निर्बाध शाश्वत महाअनुपम सौख्य मिलता है अभी ॥

(७)

यावन्नोदयते प्रभापरिकरः श्रीभास्करो भासयंस्-
तावद्धारयतीह पंकजवनं निद्रातिभारश्रमम् ।
यावत्त्वच्चरणद्वयस्य भगवन्न स्यात्प्रसादोदय-
स्तावज्जीवनिकाय एष वहति प्रायेण पापं महत् ॥

\+ + + +

जब तक प्रभा से पूर्ण रविका उदय नभ में हो नही,
तब तक कमल वन वापिका में कभी खिल सकता नहीं ।
त्यो तुम चरणयुग का प्रसाद न हो मनुज पर सौख्यदा ।
रहे दुख को भोगता नर पाप फल से सर्वदा ॥

(८)

शांतिं शांतिजिनेन्द्र ! शांतमनसस्त्वत्पादपद्माश्रयात्
संप्राप्ताः पृथिवीतलेषु बहवः शांत्यर्थिनः प्राणिनः ।
कारुण्यान्मम भाक्तिकस्य च विभो ! दृष्टिं प्रसन्नां कुरु,
त्वत्पादद्वयदैवतस्य गदतः शांन्त्यष्टकं भक्तितः ॥८॥

\+ + + +

शाति मन हो, शाति इच्छुक आपके पद पद्म का,
आश्रय करे जो जीव जग में सौख्य ले शिव सद्म का ।
मुझ परम भाक्तिक भव्य की अब दृष्टि उज्ज्वल कीजिए,
तुम पादस्तुति ही शरण मेरे शाति अनुपम कीजिए ॥

(९)

शांतिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं शील-गुणव्रत-संयमपात्रं ।
अष्टशतार्चित-लक्षणगात्रं नौमि जिनोत्तममम्बुजनेत्रम् ॥

(१०)

पञ्चममीप्सितचक्रधराणां पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च ।
शांतिकरं गणशांतिमभीप्सुः षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ॥

(११)

दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिदुन्दुभिरासनयोजनघोषौ ।
आतपवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मंडलतेजः ॥

(१२)

तं जगदर्चितशांतिजिनेन्द्रं शांतिकरं शिरसा प्रणमामि ।
सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिं मह्यमरं पठते परमां च ॥

(१३)

येऽभ्यर्चिता मुकुटकुंडलहाररत्नैः,
शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्माः ।
ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपाः,
तीर्थंकराः सततशांतिकरा भवन्तु ॥

(१४)

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां यतींद्रसामान्यतपोधनानाम् ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शांतिं भगवान् जिनेन्द्रः

(१५)

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु वलवान् धार्मिको भूमिपालः ।
काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यान्तु नाशम् ॥
दुर्भिक्षं चौरमारिः क्षणमपि जगतां मास्म भूज्जीवलोके ।
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥

(१६)

तद्द्रव्यमव्ययमुदेतु शुभः स देशः,
संतन्यतां प्रतपतां सततं स कालः ।
भावः स नन्दतु सदा यदनुग्रहेण,
रत्नत्रयं प्रतपतीह मुमुक्षुवर्गे ॥

(१७)

प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञानभास्कराः ।
कुर्वन्तु जगतां शान्तिं वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥

इच्छामि भन्ते सातिभक्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं पचमहाकल्लाणसंपण्णाण अट्ठमहापाडिहेर सहियाणं चउतीसातिसयविसेससजुत्ताण वत्तीसदेवेंद-मणिमयमउडमत्थय महियाण बलदेववासुदेवचक्कहररिसि-मुणि-जदि-अणागारोवगूढाणं थुइसयसहस्सणिलयाण उसहाइवीरपच्छिममगल महापुरिसाणं

णिच्चकाल अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, वोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं जिनगुणसंपत्ति, होउ मज्झं ॥

प० पू० १०८ आचार्य श्री वीरसागरजी महाराज

जन्म—	मुनि दीक्षा—	स्वर्गवास—
वीरगाव (महाराष्ट्र)	वि० स० १६८०	खानिया (जयपुर)
वि० स० १९३२	आश्विन शुक्ला ११	वि० स० २०१४
आषाढ शुक्ला पूर्णिमा	आचार्य श्री शान्तिसागरजी	आश्विन कृष्णा
	महाराज से	अमावस्या

प० पू० १०८ आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज

जन्म—	मुनि दीक्षा—	स्वर्गवास—
अढगाव (महाराष्ट्र)	स० २००६ नागोर	श्री शाति वीरनगर (महावीरजी
	आ श्री वीरसागरजी महाराज से	वि० स० २०२५ फा. कृ ३०

श्री १०८ श्री आचार्य शिवसागरजी महाराज को

श्रद्धांजलि

(रचयित्री–आर्यिका ज्ञानवतीजी)

हे सूरिवर ! शिवसिधु गुरुवर ! भव्य कैरव चन्द्रमा ।
हे साधुगण सेवित चरण ! मुनि पद्मबोधन अर्यमा ।।
मुनि आर्यिका ऐलक सुक्षुल्लक क्षुल्लिका गण से सहित ।
वर्णी सुश्रावक श्राविका छात्रादि गण से विभूषित ।।१।।

बहु घोर तप उपवास करके श्रात भी न कभी हुये ।
अति क्षीण तनु वसु अस्थिमय वपु मे अतुल शक्ती लिये ।।
उपदेश दोनो काल चर्चा में सदा तत्पर रहे ।
सग्रह अनुग्रह तथा निग्रह में कुशल आचार्य थे ।।२।।

रस त्याग औ उपवास से शिव मार्ग थे साकार तुम ।
आध्यात्मवादी विषयलोलुप को किया आह्वान तुम ।।
दिखला दिया तुमने कि पचम काल में है मुनि अभी ।
निर्दोष चर्या पालते है देख लो आकर सभी ।।३।।

मध्यान्ह में जब घाम में तुम ध्यान में निश्चल हुए ।
सचमुच अहो ! तव भानु भी लज्जित हुआ तव तेज से ।।
गम्भीर सागर सम सुमेरु सम चरित सम्यक्त्व में ।
गुण ज्ञानरत्नाकर भविक जन खेत सिचन मेघ है ।।४।।

सघाधिपति गुरुवर ! तुम्हे शत २ नमन शत २ नमन ।
हे मोक्ष पथ के सत्पथिक ! शत २ नमन शत २ नमन ।।

वहु भव्य जन को बोध देकर मुनि बना निज समकिये ।
होकर अकिचन भी विभूति सु रत्नत्रय गुण मणि दिये ।।५।।

श्री वीरसागर गुरु वचन से कार्य सूई का किये ।
फल रूप त्यागी गुण पचास इक सूत मे हो पिरो लिये ।।
कर वृद्धि चउसघ की द्विगुण बहु शिष्य रत्न महान तम ।
नहो काम कैची का किया गुरु-वाक्य मे अनुरक्त मन ।।६।।

सब बाल वृद्ध सरोगि शिष्यो को सभाला मातृवत् ।
विद्या सुशिक्षा दान दे दुर्गुण निकाला वैद्यवत् ।।
स्नेह अमृतमय सुजल से शिष्य उपवन सीचकर ।
ध्यानाध्ययन सद् गुणमयी पुष्पो फलो से युक्तकर ।।७।।

व्यापा यश: सौरभ दिविज तक गगन चुम्बी पुष्प सम ।
इस शिष्य उपवन बीच सच्चे आप ही थे कल्पद्रुम ।।
हा! हत ! हत ! विधे ! तुम्हे क्या हो गया यह क्या किया ।
झट, हम सभी के बीच से ये "कल्पतरु गुरु" हर लिया ।।८।।

हे ! काल निष्ठुर ! निर्विवेकिन् ! यह अचानक वज्रवत् ।
गुरुवर वियोग सहे कहो किस विध धरें हम धैर्य अव ।।
श्रद्धाजलि पुट मे लिये अश्रु सुमन गुरु भक्ति से ।
गुरु चरण मे अर्पण करू मै "ज्ञानवती" त्रय शुद्धि से ।।९।।

आचार्यश्री धर्मसागरस्तुतिः

यो धर्मसिंधुर्गुणरत्नसिंधुः ।
भव्याब्जबंधुर्मुनिकैरवेन्दुः ॥
जिष्णुस्तरिष्णुर्भवदुःखसिंधोः
आचार्यवर्यं प्रणमाम्यहं तं ॥१॥

धर्म के सागर ! गुण रत्नाकर ! भव्य कमल बोधन भास्कर !
मुनिजन मन कैरव विकास करने को शीतल रजनीकर ॥
जयशाली भवदुख समुद्र से तरने वाले जो गुरुवर ।
उन श्री गुरु आचार्य प्रवर को नमन करूं मन वच तन कर॥१॥

विरज्य संसारशरीरभोगात्
रत्नत्रयं मुक्तिकरं दधानः
पूज्यः पवित्रो मुनिपुंगवो यः
तं सूरिवर्यं हृदि भावयामि ॥२॥

नश्वर जग शरीर भोगों को विरक्त हो छोडा तुमने ।
मुक्ति प्रदायक शुभ रत्नत्रय उत्तम निधि पायी तुमने ॥
रत्नत्रय से पूज्य पवित्र हुये मुनिपुंगव ! सरल महान ।
उन आचार्य प्रवर गुरु का मैं करूं हृदय में नित प्रति ध्यान॥२॥

श्रीचन्द्रसिंधुं यमिनां वरिष्ठं ।
चर्याक्रियायां खलु सिंहवृत्तिं ॥

संश्रित्य भक्त्या हितकाम्यया तं ।
दीक्षामयाचिष्ट भवाब्धिहान्यै ।।३।।

मुनिजनो मे वरिष्ठ जग में ख्यात चन्द्रसागर मुनिराज ।
चर्याक्रिया सभी मे निर्भय सिंहवृत्ति धारी ऋषिराज ।
भक्ति से उनका आश्रय ले स्वहित कामना से प्रेरित ।
दीक्षा मागी भवसागर के नाश हेतु शिवसुख दायक ।।३।।

संवीक्ष्य योग्यं गुरुचन्द्रसिंधुः
व्यधादिमं क्षुल्लकभद्रसिंधुं ।।
स्वाध्याय निष्ठो व्रतशीलयुक्तः ।
संघेन सार्धं व्यहरत् पृथिव्यां ।।४।।

गुरुवर चन्द्रसिधु ने भी इनको सब योग्य जानकरके ।
क्षुल्लक दीक्षा दे दी सुंदर नाम भद्रसागर करके ।।
सदा करे स्वाध्याय प्रेम से व्रत गुण शील सहित जग मे ।
गुरुवर के सघ में रहकर ही बहुत विहार किया तुमने ।।४।।

दुर्दैवतः प्राप गुरुः समाधिं
प्रापत्तदा त्वं गुरुवीरसिंधुं ।
साक्षाद् भवाब्धौ वरधर्मपोतं ।
तस्मात् सुजग्राह जिनेन्द्रदीक्षां ।।५।।

मुनि श्री चन्द्रसिधु दुर्विधवश शीघ्र समाधि प्राप्त किये ।
तब ये क्षुल्लक "वीरसिधु गुरुवर" का आश्रय प्राप्त किये ।।

श्री गुरुवर साक्षात् धर्मवर की नौका भवतरने को ।
इनसे मुनिव्रत लेकर प्रगटे "धर्मसिधु" वदन उनको ।।५।।

अष्टोत्तरान् विंशतिमूलभूतान्
गुणान् सुगृह्णन् विधुतुल्यकान्तान् ।।
तपस्तपन् जैनमतानुसारि ।
विद्वान् महिष्ठो गुरुधर्मसूरिः ।।६।।

चन्द्रसमान धवल अट्ठाईस मूल गुणो को धारण कर ।
जिनमत के अनुसार तपश्चर्या मे रत रहते दुःखहर ।।
स्वयं तरे औरो को भी भवसिंधु पार करते भवहर ।
महा महिम पद पर निष्ठित है धर्मसिंधु आचार्य प्रवर ।।६।।

अध्यात्ममूर्तिः स्वपरोपकारी ।
शास्ता सदा मोक्षपथस्य लोके ।।
त्यागी विरागी मुनिपो दृढीयान् ।
महाव्रती त्वं जयतान् महात्मन् ! ।।७।।

आध्यात्मिक मूर्ति है निज पर उपकारी श्री सूरिवर ।
भविजीवो को नित ही करते मोक्षमार्ग उपदेश प्रखर ।।
परिग्रह त्यागी सदा विरागी मुनिवर दृढ़ श्रद्धानी हो ।
महाव्रती हे पूज्य महात्मन् ! सदा आप जयशील रहो ।।७।।

सूरेः शिवाब्धेश्च दिवंगतस्य

सदा क्रियाद् विश्वहितं च नश्च ।
सघस्य श्रेयोऽपि मुनिर्यशस्वी ॥८॥

पूज्य सूरि शिवसागरजी की हुई समाधि सहसा ही ।
उनके शुभ आचार्य पट्ट को पाया तुमने श्रेष्ठ सही ॥
सदा जगत का हित मेरा भी चउसघ का भो हित कीजे ।
बाल ब्रह्मचारी हे मुनिवर ! सदा जगत मे यश लीजे ॥८॥

धर्मामृतैः सिञ्चति भव्यजीवान् ।
धर्मे चरित्रे च युनक्ति शिष्यान् ॥
कारूण्यरत्नाकर ! पुण्यमूर्ते !
त्वां नौमि जीव्याश्च सदा भुवि त्वं ॥९॥

धर्मामृत से भव्य जनो को सिचनकर पोषित करते ।
धर्मचरित में सदा लगाते शिष्यों को प्रेरित करते ॥
पुण्यमूर्ति हे करुणासागर ! सबको पुण्य पवित्र करो ।
करूँ मैं स्तुति भक्ति भाव से पृथ्वी पर चिरकाल जियो ॥९॥

नमोऽस्तु तुभ्यं मुनिधर्मसूरे !
नमोऽस्तु तुभ्यं त्रयरत्नमूर्ते !
नमोऽस्तु तुभ्यं जगतां हिताय ।
नमोऽस्तु तुभ्यं गुरुवर्य ! नित्यं ॥१०॥

नमोऽस्तु तुमको धर्मसिंधु आचार्य ! जगत मे धर्म करो ।
नमोऽस्तु तुमको रत्नत्रय की मूर्ति ! रत्नत्रय पूर्ण करो ॥

नमोऽस्तु तुमको विश्व हितकर ! सबका नित कल्याण करो ।
नमोऽस्तु हे श्री गुरुवर! मेरा नित प्रति तुम स्वीकार करो।।१०।।

नमोऽस्तु मुनिचन्द्र ! ते सकल भव्यसंतापहृत् !
स्तवीमि गुरुभक्तितः सकल संघनाथं मुदा ।।
नमामि मुनिपुंगवं वरसमाधिसंसिद्धये ।
क्रियाद्धि सततं भवांश्च किल "ज्ञानमत्यै" शिवं ।।११।।

नमोस्तु तुमको मुनि चन्द्रमा सकल भव्य सताप हरन ।
हर्षित होकर परम भक्ति से संघनाथ का करूं स्तवन ।।
नमन करूँ मैं मुनिपुंगव को मम समाधि सिद्धि कीजे ।
तथा आप अनवरत धर्मरत ज्ञानमती को शिव दीजे ।।११।।

मासोपवासिना वृद्धैर्बालैर्विज्ञैश्च साधुभिः ।
आर्याभिस्त्वं चतुःसंघैर्वृतो जीयाच्च भूतले ।।१२।।

मास मास उपवासी मुनि से वृद्ध बाल साधु गण से ।
विद्वद्वर साधु वर्गो से सहित तथा आर्या गण से ।।
शोभित सदा चतुर्विध साघ से वेष्टित तुम जयशील रहो ।
सदा जगत में जियो धर्म भास्कर चमको शुभ कीर्ति लहो।।१२।।

॥ श्री श्रुतसागर मुनिराज स्तुतिः ॥

सिद्धांतवेदी श्रुतपारगो यः ।
वाग्मी पटुः सत्त्रयरत्नधारी ।
अकिंचनः शीलगुणाकरश्च ।
नमाम्यहं श्री श्रुतसागरं तं ॥१॥

सत् सिद्धातविज्ञ श्रुतपारगत वाग्मी पटु जो मुनिराज ।
सद् रत्नत्रय निधि के स्वामी फिर भी नही कुछ उनके पास ॥
सद्गुण शील रत्न के सागर धर्म उजागर मुनिवर को ।
नमू सदा श्री श्रुतसागर जी धर्म ऋषीश्वर गुरुवर को ॥१॥

स्वाध्यायनिष्ठो यमिनां वरिष्ठः ।
श्रेष्ठो विरागी महतां महिष्ठः
ज्येष्ठो मुनीशो गुणिनां गरिष्ठः ।
ईडे सदा त महिमा विशिष्टं ॥२॥

सदा रहे स्वाध्याय निष्ठ सब साधु वर्ग मे वरिष्ठ है ।
श्रेष्ठ विरागी परिग्रह त्यागी महापुरुष मे महिष्ठ है ॥
मुनियो में है श्रेष्ठ पूज्यतम गुणीजनो मे गरिष्ठ है ।
करूँ सदा मै स्तुति उनकी सबमे महिमा विशिष्ठ है ॥२॥

त्यक्त्वा सुपुत्रादि कुटुंबिवर्गान् ।
धर्मानुकूलां रमणीं पतिव्रतां ॥

श्री वीरसिंधुं गुरुमाप मोदात् ।
दीक्षां श्रितो जातजिनेन्द्ररूपां ॥३॥

पुत्र पुत्रिया मित्र कुटुम्बी वर्ग तथा सब सपति को ।
पतिव्रता धर्मानुकूल पत्नी को छोड़ा अरु घर को ॥
श्री गुरु वीरसिंधु मुनिवर को प्राप्त किया हर्षित होकर ।
क्षुल्लक दीक्षा ले नतर जिनरूप धरा मुनिवर होकर ॥३॥

नित्यं हि सूरेरनुकूलवृत्तिं ।
कुर्वंस्तथासौ खलु सूरिकल्पः ॥
त्यागी सदाध्यात्मिकबोधनिष्ठः ।
जीव्यादसौ वर्षशतं पृथिव्यां ॥४॥

श्री आचार्य प्रवर के ही अनुकूल वृत्तिधारी संतत ।
तथा संघ परिपालन में नित कुशल तुम्ही हो सूरिकल्प ॥
त्यागी हो अध्यात्म ज्ञान में निष्ठ कुशल वैरागी हो ।
इस जग मे सौ वर्ष जियो तुम हे गुरुवर ! जयशील रहो ॥४॥

भव्याब्जिनीनां स विभास्वरः सन् ।
सतां श्रुताम्भोनिधिपूर्णचन्द्रः ॥
विवादिनां गर्वविखण्डनाय ।
स्याद्वादवाग्वज्रयुतः स्तुवे त्वां ॥५॥

भव्य कमलिनी को विकसित करने में सदा सूर्य सम हो ।
सत्पुरुषो के श्रुत ज्ञानाम्बुधि वर्धन मे पूर्ण शशि हो ॥

विसवादि जनमर्द खण्डन में स्याद्वाद वज्र वच से ।
गर्व खर्व क्षण मे करते हो ,करूँ सदा स्तुति रुचि से ।।५।।

अध्यात्ममूर्तिः किल संयमी च ।
यः संशयध्वांतहरो विवस्वान् ।।
योगी सदा निश्चयतत्वविच्च ।
स्तुवेऽपि तं सद्व्यवहारविज्ञं ।।६।।

आध्यात्मिक मूर्ति होकर भी महा संयमी पूज्य बने ।
सशयतिमिर विनाशी भास्कर योगी ध्यानी मुनी बने ।
हो निश्चय तत्वज्ञानी फिर भी व्ययहार सभी पालो ।
करूँ स्तुति भक्ति भाव से धर्म तीर्थ को सचालो ।।६।।

नयाश्रितैर्वागमृतैः प्रसिञ्चन् ।
चर्चासभायां खलु लब्धकीर्तिः ।।
युक्त्या महत्या स्फुटयत्यशेषं ।
तत्वं श्रुताब्धि तमहं प्रवंदे ।।६।।

निश्चयनय व्यवहार नयाश्रित कुशल वचन अमृत से ही
चर्चा में उपदेश सभा में प्रसिद्ध कीर्तिमान तुम्ही ।।
अकाट्य युक्ति दृष्टांतो से अर्थ विशद प्रस्फुट करते ।
ऐसे श्रुतसागर मुनिवर की करूँ वंदना मुदमन से ।।७।।

वात्सल्यमूर्ते ! च कृपापयोधे !
संघे गरीयन् ! किल सर्वसाधून् ।।

साध्वीश्च छात्रान् मृदुमिष्टवाक्यैः ।

संतोषयंस्तं शिरसा नमामि ॥८॥

सद् वात्सल्य मूर्ति भो करुणा सिंधु संघ में वरिष्ठ तुम ।
सब साधुजन साध्वीगण छात्रादिक अरु ब्रह्मचारी गण ॥
सबको मृदुतर मधुर वचन से बोधित तोषित करते हो ।
आधि व्याधि में बड़े प्रेम से पालन करो नमूं तुमको ॥८॥

नमोऽस्तु ते धर्मधुरंधराय ।
नमोऽस्तु ते भव्यहितंकराय ॥
नमोऽस्तु ते बोधिसमाधिभाजे ।
नमोऽस्तु ते साधुगणार्चिताय ॥९॥

नमोऽस्तु तुमको धर्मधुरंधर ! धर्म मेघ को बरसाओ ।
नमोऽस्तु तुमको भव्यहितकर ! भविजन को हित दरसाओ ।
नमोऽस्तु तुमको बोधि समाधि निधान ! सबको बोधि दो ।
नमोऽस्तु तुमको साधु गणार्चित ! सबको सम्यक शुद्धि दो ॥९॥

नमोऽस्तु मुनिवर्य ! ते सकलतापहृच्चन्द्रमः !
नमोऽस्तु गुरुवत्सलत्वगुणरत्ननिधये च ते ॥
क्रियाद्धि जगतां शिवं मधुरवाक्सुधां वर्षयन् ।
पुनातु भविनां मनः शुचिचरित्रपूतो भवान् ॥१०॥

नमोऽस्तु तुमको हे मुनिपुंगव ! सकल ताप हर चन्द्र समान ।
नमोऽस्तु गुरु वात्सल्य गुणादिक रत्नों की निधि आप महान् ।

मधुर वचन अमृत बरसाते हुये जगत का हित कीजे।
शुद्ध चरित से सदा पवित्रित भविजन मन पवित्र कीजे ॥१०॥

श्री शिवसागरैः सार्धं चिरं संघः प्रवर्धितः।
संतर्पयंस्तथा भूयाद्"ज्ञानवत्या" समाधये ॥११॥

श्री सूरि शिवसागरजी के सघ में रहकर चउसंघ को।
सर्वधित सरक्षित करते रहे सभी के गुण गण को ॥
तथैव नित ही चतुः सघ को संतर्पित करते रहिये।
'ज्ञानवती" की शुभ समाधि हो आशीर्वच देते रहिये ॥११॥

मुनिश्री वर्धमान सागरः

(रचयिता—इन्द्रलाल शास्त्री)

मध्यप्रदेश-गत-मालव-भूमिदेशे ।
ख्यातं सनावदपुरं सुविधाविशिष्टम् ॥
श्रीपोरवाडवरजाति पचोलियाख्ये ।
आस्ते कुले कमलचन्द्रगृही धनाढ्यः ॥१॥

तस्याभवत् सुगृहिणी हि मनोरमाख्या ।
श्री जैनधर्मधिषणा कुलधर्मदीपा ॥
षड्बिन्दुखद्वयमिते[1] नृपविक्रमेऽब्दे ।
सन्मासभाद्रसित-सप्तम-सद्दिने हि ॥२॥

तस्यां बभूव यशवंतकुमार एषः
लब्धं दिगंबर मुनीन्द्रपदं हि येन ॥
सद्यौवने सकलतत्त्वविदोऽपि भोगे ।
दृष्टा रताः परमसौ विषयाद्विमुक्तः ॥३॥

मात्रा तयाजनि सुतासुत रत्नसंख्या[2] ।
शिष्टे द्वयेऽन्यतर एष मृताः समस्ताः ॥

---

१. विक्रम स० २००६ २. चौदह

संधार्य येन मुनिराजपदं कठोरं ।
दीप्तं कुलं च जनको हि मृतापि माता ॥४॥

हिंद्व्याङ्गबोधनिपुणां पठने वरिष्ठं ।
श्रीजैनधर्मरतबुद्धिरसं पटिष्ठं ॥
प्राप्ता सुयोगवशतो विदुषी महिष्ठा ।
श्री ज्ञानमत्यभिधया प्रथिता महार्या ॥५॥

श्रुत्वोपदेशवचनानि तदुद्गतानि ।
वैराग्ययोगधिषणा सुदृढा बभूव ॥
संकल्पितं मनसि शीघ्रमहं मुनिः स्याम् ।
ताभिः सहात्र शिवसागरसंघमाप ॥६॥

धृत्वा विरक्तिजनितां मनसि प्रवृत्तिं ।
आचार्यवर्यशिवसागरमाससाद ॥
संघेवरिष्ठश्रुतसागरमाप्य सोऽयं ।
आशीर्वचांसि समवाप सुमुक्तिदानि ॥७॥

दुर्दैवयोगवशतः शिवसागरो यः ।
हा ! हंत ! हा ! गुरुरितो निधनं ह्यकस्मात् ॥
तस्योत्तराधिकृतिमाप विमुक्तिमार्गी ।
श्री धर्मसागरमहामुनिराट् महात्मा ॥८॥

तत्रैव साधुगणवत्सलतां सुविंदन् ।
नत्वा ह्ययं शुचिमना गुरुधर्मसूरिम् ॥
दीक्षामयाचत ततो निजजात-रूपां ।
योग्यं निरीक्ष्य गुरुणा खलु दीक्षितोऽभूत् ॥६॥

शिखरिणी छन्दः

महावीरक्षेत्रे विविधजन-संदोहजटिले ।
सिताष्टम्यां मासे तपसि जिनकल्याणसमये ॥
चतुःसंघे भव्ये शरयुगखयुग्मेऽतिविमले ।
जहौ ग्रन्थं सर्वं जयजयकृतः विक्रमगते ॥१०॥

श्रीवीरसागरगुरोः सुसमाधिपूते ।
खान्याभिधे जयपुरस्थ-पवित्ररम्ये ॥
सद्ध्यानयोगनिरतस्य महात्मनोऽपि ।
ज्योतिर्दृशोर्गत मिहास्य रुजा ह्यकस्मात् ॥१०॥

सर्वे चिकित्सकवरा अवदन् रुजोऽस्याः ।
सूचीसुवेधमपहाय न कोऽप्युपायः ॥
ईदृग्विधं लघुवयस्कमवेक्ष्य संघः ॥
चिंताकुलोऽजनि महाव्यसनाब्धिमग्नः ॥१२॥

सोऽयं मुनिर्दृढयमी-जिनचन्द्रमूर्तिं ।
श्रित्वा समस्त भवरोगहरं जिनेन्द्रं ॥
श्री संभवेन ह्यभिनंदनसिंधुना च ।
सार्धं सुमेरुहृदयो न चचाल मार्गात् ॥१३॥

भक्त्या सहान्यमुनि-भिर्गतदेहमोहः ।
श्रीपूज्यपाद-कृतशांति-सुभक्तिपाठः ॥
उद्वेल-भक्ति-रसभार-भरैः कृतः सन् ।
सद्दर्शनेन सह दृष्टिरभूत् प्रसन्ना ॥१४॥

प्रत्यक्षमेव जिनभक्ति-चमत्कृतिं हि
ऋष्यार्यिका सकलसंघजनो विलोक्य ॥
हर्षाश्रुभिश्च पुलकांचित-देहतो हि ।
सद्दृष्टि-शुद्धि-विभुताममलां चकार ॥१५॥

भक्तेः फलं शुभतरं मुनिराजदार्ढ्यम् ।
दृष्ट्वा समस्त जनताप्यतिविस्मिताभूत् ॥
धन्यो महामुनिरसौ जिनधर्म एषः ।
धन्या विरागमहिमा मुनिसंघनाथः ॥१६॥

ज्येष्ठे सुमासि तपने सितसप्तमीच ।
तस्यां तृतीयदिवसे खलु लब्धचक्षुः ॥

अष्टाविंशतिसद्गुणान्निगदितान् साधूचितान् सिद्धिदान् ।
निर्दोषं प्रतिपालयन् दृढयमी रोगोपसर्गं जयन् ॥
स्वाध्यायाध्ययनैकनिष्ठधिषणस्त्यागी युवासंयमी ।
जीयादात्मदिवाकरो मुनिवरः श्री वर्धमानः सुधीः ॥२२॥

न्यायव्याकृतिधर्मशास्त्रपठनेशश्वत् सुबद्धोद्यमः ।
शान्त्यै शांति जिनेन्द्रभक्तिनिरतः कुर्वन्गुरूणांनतिं ।
भक्त्या दर्शित पूज्यपादमुनिकृद्भक्तिप्रभावो भुवि ।
जीव्यात् वर्षशतं तमोऽपहरतात् श्री वर्द्धमानो मुनिः॥२३॥

दिग्वाससं वर्धमान-सागरं नंनमीम्यहं ।
त्वत्पादभक्ति संलीन, इन्द्रलालः सदा हृदा ॥२४॥

मुनिश्री वर्धमानसागरजी

मालव देश ख्यात है मध्यप्रदेश में सुन्दर सुखकर ।
तीर्थ सिद्धवर कूट निकट इक नगर सनावद है मनहर ।।
पोरवाड जाति में उत्तम पचोलिया वश भूषरण ।
कमलचन्द्र इक सेठ ख्यात है धनी सदा जिन धर्म मगन ।।१।।

उनकी गृहिणी मनोरमा थी जैन धर्म पालन दक्षा ।
पतिव्रता कुलधर्म दीपिका मुनिवर जन्मखानि पूता ।।
दो हजार छह विक्रम संवत में शुभ भाद्र माससित में ।
तिथि सप्तमी के उत्तम दिन जन्म लिया इक बालक ने ।।२।।

नाम रखा यशवतकुमार यश के पुंज आज जग में ।
लिया दिगंबर मुनिपद उत्तम जिनने नई जवानी में ।।
सकल तत्व ज्ञानी भी जब भोगो मे आज मगन देखे ।
परतु ये मुनि विषय सर्प से मुक्त हुये दीक्षा लेके ।।३।।

जन्म दिया माता ने चौदह पुत्र-पुत्रियों को उसमें ।
दो ही आयुष्मन्त बचे ये बारह गये कालमुख में ।।
उनमें इक जिन रूप रूप धर निजकुल सुभग प्रदीप्त किया ।
पिता प्रदीपित किये स्वर्ग गत माता को भी दीप्त किया।।४।।

हिंदी इगलिश विद्या में तुम कुशल पठन में कुशाग्रधी ।
धर्मशास्त्र स्वाध्याय निपुण हो सभी विषय मे पटिष्ठधी ।।
प्राप्त किया तुम सुयोगवश से विदुषी "माता ज्ञानवती" ।
ख्यात आर्यिका-गण में जो है यथा नाम है तथा मती ।।५।।

उनके श्रीमुख से निर्गत उपदेश वचन को सुनकरके ।
त्यागभाव की सतत प्रेरणा से झट प्रेरित होकरके ।।
धर्म पठन सत्संगति से वैराग्यांकुर प्रस्फुटित हुआ ।
मुनि बनू इस रुचि से आर्या सह मुनि सघ को प्राप्त किया ।।६।।

मोहभाव तज श्री गुरुवर सूरीवर शिवसागरजी के ।
दर्शन कर श्रुतसागरजी के वरदहस्त को पाकर के ।।
उनके शुभ आशीषो से वात्सल्य सुधारस सिचन से ।
बिनाभ्यास ही इकदम मुनि दीक्षा मागी शिवसागर से ।।७।।

श्री गुरुवर दुर्दैवनिठुरता से हा ! सहसा स्वर्ग गये ।
अहो ! काल की निदंयता लख सब जन चिंतित दुखित हुये ।।
उनके उत्तराधिकृति को श्री धर्मसिधु मुनि प्राप्त किये ।
विमुक्तमार्गी सरल हृदय आचार्य प्रवर शत वर्ष जिये ।।८।।

सघ में सभी साधुवर्गो का धर्मप्रेम अतिशय पाकर ।
श्री यशवत पवित्र हृदय से धर्मसिंधु को वदनकर ।।
जन्मजात जिन रूप धरी दीक्षा मागी भवदु.खहरी ।
गुरुवर ने भी योग्य समझकर दीक्षा दी जग पूज्यकरी ।।९।।

अतिशय युत महावीरक्षेत्र मे लाखो जन समुदायो में ।
शातिनाथजिन पचकल्याणक मे चउविध सग के बिच में ।।
फाल्गुन सुदि अष्टमी तिथि की सवत् दो हजार पच्चीस ।
सर्व परिग्रह तजा सभी जन जयजयकार किये नत शोश।।१०।।

आचार्य प्रवर श्री वीरसिधु की श्रेष्ठ समाधि से जो पूत ।
जयपुर मे खान्या प्रदेश है चूलगिरि पर्वत से पूज्य ।।

धर्मध्यान में निरत महामुनि के भी अशुभ कर्मवश से ।
अकस्मात् नेत्र की ज्योति लुप्त हुई व्याधिवश से ।।११।।

डाक्टर वैद्य सभी बोले इस रोग की कठिन चिकित्सा है ।
इन्जेक्शन के बिना न कोई उपाय अब बन सक्ता है ।
लघु वयस्क इस विध मुनि को लख सभी सघ चितातुर हो ।
महादु.खसिंधु में डूबे किस विध सकट टले अहो ! ।।१२।।

इन मुनि ने जब सुनी ये बात दृढ़ संकल्पित वाक्य कहे ।
इन्जेक्शन नही लगवाऊ ये आख ही क्या चाहे प्राण नशे ।।
भवहर जिनवर चन्द्रमूर्ति के चरणों मे शिर टेक दिया ।
अभिनदन सभव मुनिवर यह दृढ प्रतिज्ञ निश्चलित हिया ।।१३।।

साधुगण सह भक्तिभाव से पूज्यपाद मुनिवर्य रचित ।
शाति भक्ति के पाठ घोष को किया विविध विध भावों युत ।।
भक्ति रस उद्वेल उमड़कर तत्क्षण ही मुनिवर की आख ।
ज्योति प्रकट हो गई एकदम सद्दर्शन विशुद्धि के साथ ।।१४।।

शातिनाथ भक्ति के अद्भुत चमत्कार को देख प्रत्यक्ष ।
मुनिगण तथा आर्यिका गण गद्गदवाणी युत चउविधसघ ।।
आनदाश्रु बरसाये पुलकित हो सब जन नाच उठे ।
सम्यग्दर्शन की विशेष निर्मलता कर सब फूल उठे ।।१५।।

भक्ति का शुभतर उत्तम फल मुनिवर की अति दृढता देख ।
विस्मित हुई सकल जनता भी भक्ति विभोर हुई क्षण एक ।।
धन्य महामुनि ! धन्य धन्य ! जिन धर्म महा उत्तम जग में ।
धन्य विरागी की महिमा आचार्य वर्य धन धन्य ! बने ।।१६।।

ज्येष्ठ सुदी सप्तमी तिथि में तृतीय दिन खुल गये सुनेत्र ।
भक्ति विभोर हुए सब जन मन खिले सभी के हृदय सरोज ।।
दुषम कलुप इस कली काल मे भी ऐमे मुनि पुंगव आज ।
कठिन कठोर तपश्चर्या कर ज्ञान ध्यान का करें विकास ।।१७।।

वात प्रकोपज विविध रोग के होते हुए भी श्री मुनिराज ।
क्वचित् कदाचित् भी सयम से नहि च्युत होते शिव के काज ।।
त्यागी शात विरागी निर्मलचेता पठनासक्तमती ।
युग युग तक जयशील रहे ये श्रेष्ठ यशस्वी बालयती ।।१८।।

रोगोपसर्गजयी विद्वन्मुनि आव्यात्मिक योगी जग मे ।
कीर्ति तुम्हारी दिगदिगत में व्याप्त हो रही उज्ज्वल ये ।।
वीस वर्ष के नवयौवन मे सहसा इतना महान त्याग ।
इस युग में ऐसा दृढ योगी नही हुआ नही होगा आज ।।१९।।

श्री मुनिवर्धमानसागरजी विलासमय भौतिक युग में ।
सर्व ममत्व परिग्रह तज झट सीधे उत्तम मुनि बने ।।
वास्तव मे वो ही नर जग में आध्यात्मिक कहला सक्ता ।
विषय भोग तज जो त्यागी बनकर निज आत्मा मे रमता ।।२०।।

भव दु खहर मुनि चरण स्वग अपवर्गकरण सब आधिरहित ।
करू वदना मैं नितप्रति ही भाव भक्ति से मस्तक नत ।
बाल काल मे सभी जगत के भोगो को छोड़ा रुचि से ।।
भवदधितारक मुक्ति मार्ग में मन को जोड़ा प्रीति से ।।२१।।

आगम कथित अठाईस साधु योग्य मूल गुण सिद्धिप्रद ।
दोषरहित पालन करते रोगादि परीषह जयी सुदृढ ।।

स्वाध्याय अध्ययन निरतमन त्यागी युवा संयमी हो ।
आत्म दिवाकर ! वर्धमान मुनिवर !, सतत जयशील रहो ।।२२।।

धर्मशास्त्र व्याकरण न्याय पढने में सदा सुउद्यमशील ।
शाति हेतु श्री शातिनाथ भक्ति मे रत गुरुभक्त प्रवीण ।।
मुनिवर पूज्यपाद कृत भक्ति प्रभाव दिखलाया जग में ।
श्री मुनिवर्द्धमान भास्कर शत वर्ष जिये तम नाश करे ।।२३।।

दिशावस्त्रधारी मुनिवर श्री वर्द्धमान सागर तुमको ।
पुनः पुनः मैं नमस्कार करता हू भक्तिभाव नत हो ।।
तुम पद भक्ति लीन शास्त्री श्री इन्द्रलाल के हृदय बसो ।
धर्मसिधु के शिष्य जगत मे सूर्य समान सदा चमको ।।२४।।

॥ श्री ॥

स्व. आचार्य श्री शिवसागरजी

आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज का जन्म महाराष्ट्र में औरगाबाद जिले के अड़गांव नामक एक छोटे से कस्बे मे हुआ था। आपने खण्डेलवाल जैसी विख्यात जाति में उत्पन्न होकर भारत-भूमि को अलकृत किया था। आपके पिता का नाम श्रीनेमिचदजी एव माता का नाम श्रीमती दगड़ा बाई था। आपका जन्मनाम हीरालाल था। आपका गोत्र रांवका था। बाल्यकाल से ही धार्मिक अभिरुचि होने से वैवाहिक बधनो मे आपने फसना अस्वीकार कर दिया एव आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत धारणकर त्यागियो के संसर्ग मे रहकर वैराग्य रस मे गोते लगाने लगे। आपने मुक्तागिर सिद्धक्षेत्र में सप्तम प्रतिमा के व्रत धारण किये। स० २००० फाल्गुन शुक्ला ५ के दिन सिद्धक्षेत्र सिद्धवरकूट मे आपने परम पूज्य आ. श्री १०८ वीरसागरजी से क्षुल्लक की दीक्षा ग्रहण की। उस समय आपका नाम श्री शिवसागरजी रखा गया। अन्त तक आप इसी नाम से अलंकृत रहे। सवत २००६ में आषाढ शु. ११ को नागौर में मुनि दीक्षा धारण की। शुरु से अ त तक आप आ. श्रीवीरसागरजी के साथ ही रहे। सं० २०१४ में आश्विन वदी

३० के दिन जयपुर 'खानिया' में आ. श्री वीरसागरजी महाराज की समाधि सारे संघ की उपस्थिति में हुई। तदुपरांत कार्तिक सुदी ११ स २०१४ मे आचार्य श्रीमहावीरकीर्तिजी तथा समस्त सघ की उपस्थिति में आम जनता के समक्ष बड़े समारोहपूर्वक खानिया (जयपुर) मे आपको आचार्यपद से अलंकृत किया गया।

आचार्य पद प्राप्त करने के बाद समस्त संघ को लेकर आप गिरनार यात्रा करते हुए ब्यावर पधारे। सं० २०१५ में आपने यहां पर ससघ प्रथम चातुर्मास किया।

स० २०१६—अजमेर
स० २०१७—सुजानगढ
सं० २०१८—सीकर
सं० २०१९—लाडनू
स० २०२०—खानिया
सं० २०२१—पपौरा
स० २०२२—श्रीमहावीरजी
स० २०२३—कोटा
सं० २०२४—उदयपुर
सं० २०२५—प्रतापगढ

आपके कर कमलो से आचार्य पद प्राप्ति के बाद निम्न दीक्षाएं हुई :—

सर्वप्रथम—श्री गिरनारजी (आ.) चन्द्रमतीजी, पद्मावतीजी (क्षु,) राजुलमतीजी।

खानिया (जयपुर)—ज्ञानसागरजी (मुनि), भव्यसागरजी (ऐ.)

नेमामतीजी (क्षु)।

अजमेर—ऋषभसागरजी (क्षु), संभवमतीजी (क्षु)।

सुजानगढ़—ऋषभसागरजी, भव्यसागरजी (मुनि), नेमामतीजी, विद्यामतीजी (आ.)।

सीकर—अजितसागरजी (मुनि), सुपार्श्वसागरजी (क्षु.), बुद्धिमतीजी, जिनमतीजी, राजुलमतीजी, सभवमतीजी एव आदिमतीजी (आ), श्रेयासमतीजी (क्षु.)।

खानिया—सुपार्श्वसागरजी (मुनि)।

पपोराजी—विशुद्धमतीजी (आ.), सभवसागरजी, शीतलसागरजी (क्षु.)।

श्रीमहावीरजी—श्रेयांससागरजी (मुनि), अरहमतीजी, श्रेयास-मतीजी, कनकमती (आ), धन्यमतीजी (क्षु)

कोटा—भद्रमतीजो, कल्याणमतीजी, सुशीलमतीजी, सन्मतीजी, धन्यमतीजी (आ.), विनयमतीजी (क्षु)

उदयपुर—सुबुद्धिसागरजी, यतीन्द्रसागरजी, धर्मेन्द्रसागरजी, भूपेन्द्रसागरजी, योगिन्द्रसागरजी (क्षु)।

सलूम्बर—सुबुद्धिसागरजी (मुनि.)

बासवाडा—अभिनन्दनसागरजी (ऐ.)

आपकी शासन प्रणाली बहुत ही सुदर एवं मधुर थी।

आप शिष्यों पर निग्रह और अनुग्रह करने में अत्यन्त कुशल थे। उनके जैसा सघ सचालन करने वाले केवल वे ही थे जिसके परिणाम स्वरूप आपके जीवन काल में कोई भी शिष्य स्वैराचारी नही बने तथा एक सूत्र में बधकर बड़े वात्सल्यपूर्वक रहे। आपका वात्सल्य साधुओं तक ही सीमित नही था, व्रतीयों एव श्रावको पर भी हार्दिक स्नेह रखते थे। ऐसे जगतपूज्य आचार्य श्री मिती फाल्गुन कृ० ३० स. २०२५ के दिन मध्यान्ह मे काल श्री महावीरजी अतिशय क्षेत्र से तुच्छ ज्वर से पीड़ित होकर अचानक स्वर्गस्थ हो गये।
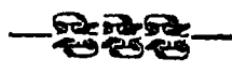
॥ श्री ॥

प. पू. १०८ श्री आचार्य धर्मसागरजी महाराज
का
जीवन-परिचय

आपका जन्म जयपुर राज्य के धमेरा ग्राम में सं० १९७० में पोष शुक्ला पूर्णिमा को खण्डेलवाल समाज के छाबडा गोत्र के परिवार में हुआ था। आपके पिता का नाम बख्तावरमलजी एवं माता का नाम श्रीमती उमरावबाई था। आपके बाल्यकाल का नाम श्री चिरंजीलालजी था। बाल्यकाल मे ही आपके माता-पिता आपको अकेला छोड़कर परलोक सिधार गये। परिवार मे आपके काका की पुत्री श्रीमती दाखाबाई के अतिरिक्त और कोई नही था। इसलिए दाखाबाई इन्हे अपने यहां बूंदी के निकट बामणगाव ले गई। वहा जाकर आपने साधारण शिक्षा प्राप्त की तथा जीवनयापन के लिए १४ वर्ष की अल्पावस्था मे ही एक छोटी सी दुकान खोल ली। लगभग २० वर्ष की अवस्था मे गाव छोड़कर इन्दौर चले गये। वहा जाकर आपने कपड़े का व्यापार प्रारम्भ किया। सौभाग्यवश कुछ दिनो के बाद इन्दौर मे आचार्य श्री वीरसागरजी महाराज का ससघ पदार्पण हुआ। आचार्य श्री के उपदेश से प्रभावित होकर आपने दूसरी प्रतिमा के व्रत ग्रहण किये। यही से जीवन में एक मोड़ आया। इसके पश्चात् बड़नगर मे श्री चन्द्रसागर जी महाराज पधारे हुए थे

प० पू० १०८ आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज

जन्म—	दीक्षा गुरु—	मुनि दीक्षा—
गंभीरा (राज)	क्षु. दीक्षा–श्रीचन्द्रसागरजी महाराज	फुलेरा [राज०]
वि० स० १९७०	मुनि दीक्षा– आ श्री वीरसागरजी	वि० स० २००८

अत: आप वहाँ उनके दर्शनार्थ पधारे। महाराजश्री के उपदेशों का आप पर इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि आपने वही पर उनसे सप्तम प्रतिमा के व्रत अङ्गीकार किये एवं मन में पूर्ण वैराग्य समा जाने से फिर साथ मे ही रहने लगे। यहां से आप महाराज श्री के साथ-साथ बिहार करते हुए नादगाव, कसाबखेड़ा होते हुए बालूज (महाराष्ट्र) पहुँचे। यहा पर आपने ससार को असार जानकर मिती चैत्र कृष्ण ७ स० २००० के दिन पू. श्री चंद्रसागरजी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण की। दीक्षोपरात आपका नाम भद्रसागरजी रखा गया। महाराजश्री के साथ रहकर आपने सर्वप्रथम चातुर्मास सा० २००० में ग्राम अडूल में (महाराष्ट्र) मे किया। पू. गुरुदेव का सत्सग आपको अधिक दिन प्राप्त नही हो सका। अत्यधिक खेद के साथ लिखना पड़ता है कि चातुर्मास समाप्ति के बाद गिरनार यात्रा के लिए विहार करते हुए मार्ग मे ही बड़वानी सिद्धक्षेत्र पर सिहतुल्य प. पू. आचार्यकल्प श्रीचद्रसागरजी महाराज का फाल्गुन शुक्ला पूर्णिमा सं. २००१ के दिन स्वर्गवास हो गया। गुरुदेव का वियोग हो जाने से आप प पू. १०८ श्रीवीरसागरजी महाराज के सघ मे पिढावा [झालरापाटन] पहुँचकर सम्मिलित हों गये इस प्रकार प. पू. श्रीवीरसागरजी महाराज के सघ में रहकर कई ग्रन्थो का अध्ययन करते हुए सं २००२ में झालरापाटन, स. २००३ में रामगंजमण्डी, सं. २००४ मे नैनवा, सं. २००५ में सवाईमाधोपुर, स. २००६ मे नागौर, स. २००७ में सुजानगढ़ मे क्षुल्लक अवस्था में रहते हुए चातुर्मास किये।

सुजानगढ चातुर्मास के वाद बिहार कर आप सघ के साथ फुलेरा आये यहा आपने पचकल्याणक के मध्य श्री वीरसागरजी से बैशाख मे ऐलक दीक्षा ली तभी से आपका नाम धर्मसागरजी हुआ एवं यहा (फुलेरा मे) चातुर्मास समाप्ति के अन्त मे कार्तिक शुक्ला १४, सं. २००८ मे परम दिगम्बर मुनि दीक्षा धारण की धर्मसागरजो नाम रखा गया। मुनि दीक्षा के बाद प्रथम चातुर्मास आचार्य श्री के साथ स. २००९ मे ईसरी किया। तदुपरात स. २०१० में नागौर, स २०११ में निवाई, स, २०१२ मे टोडारायसिंह, स. २०१३ एव २०१४ में खानिया मे किया। हार्दिक दु.खपूर्वक लिखना पडता है कि स. २०१४ मे आसोज कृष्ण अमावस्या के दिन आचार्य श्री वीरसागरजी महाराज स्वर्गस्थ हो गये। तत्पश्चात कार्तिक सुदी ११ स. २०१४ के दिन परम पूज्य १०८ श्री शिवसागर जी महाराज को आ. श्रीवीर-सागरजी के पट्ट पर आचार्य पद से विभूषित किया गया। प. पू आ. श्री शिवसागर जी महाराज से पृथक होकर स. २०१५ में वीरगाव [अजमेर] में चातुर्मास किया। स २०१६ में कालू, स २०१७ में बूदी में हुआ। इस मध्य आपने सर्वप्रथम श्रीराजमलजी को क्षुल्लक दोक्षा प्रदान की। तदुपरात स. २०१८ में शाहगढ़ (बुन्देलखण्ड), स. २०१९ में सागर (मध्यप्रदेश), स. २०२० में खुरई में चातुर्मास किया। यहा पर आपने श्रीबोधिसागरजी महाराज (पूर्वनाम पं. पन्नालालजी) को क्षुल्लक दीक्षा, दो ब्रह्मचारिणियों को क्षुल्लिक

दीक्षा तथा एक क्षु. को आर्यिका की दीक्षा प्रदान की। सं २०२१ में इन्दौर चातुर्मास किया यहां पर श्री जीवनलालजी की मुनिदीक्षा बहुत ही ठाटबाट से हुई। सं. २०२२ में झालरा-पाटन तथा सं. २०२३ में टोंक चातुर्मास किया यहां क्रमशः निर्मलसागरजी, महेद्रसागरजी, संयमसागरजी, दयासागरजी की क्षु. दीक्षाएं हुई। सं. २०२४ में बूंदी चातुर्मास हुआ यहां पर महेंद्रसागरजी की ऐलक दीक्षा, क्षु. बोधिसागरजी तथा उपरोक्त तीन महाराजों की मुनिदीक्षा हुई। स. २०२५ में बिजोलिया में चातुर्मास हुआ। चातुर्मास उपरान्त यहा से विहार करके शांतिवीरनगर की प्रतिष्ठा में सम्मिलित होने के लिए श्रीमहावीरजी पधारे। पचकल्याणक को प्रतिष्ठा के पूर्व ही आ. श्री शिवसागरजी महाराज साधारण ज्वर से पीड़ित होकर अचानक ही मिती फाल्गुण कृष्णा ३० के दिन मध्यान्ह समय में समाधि को प्राप्त हो गये अतः फाल्गुण शुक्ला ८ सं. २०२५ के दिन उनका आचार्य पट्ट आपको प्रदान किया गया। इसी दिन आपके करकमलो से ६ मुनि, २ आर्यिका, २ क्षुल्लक तथा १ क्षुल्लिका इस प्रकार ११ दीक्षाएं हुई। उनमे खासकर सनावद [मध्यप्रदेश] निवासी पोरवाड़ समाज के १९ वर्षीय नवयुवक श्री यशवतकुमारजी ने बिना कोई प्रतिमा धारण किये एकदम सोधी अद्वितीय मुनि दीक्षा धारण की। वहीं श्री महावीर जयन्ती के महान अवसर पर आ. श्री विमलसागरजी भी अपने सघ सहित पधारे थे। उस समय

श्रीमहावीरजी में अभूतपूर्व दृश्य उपस्थित हो गया। साधुओं का इतना विशाल समुदाय [२३ मुनिराज, १० क्षुल्लक, तथा लगभग ४० आर्यिकाए एवं क्षुल्लिकाए कुल मिलाकर लगभग ७३ साधु] कही पर भी सैकड़ों वर्षों पूर्व भी देखने में नही आये। नतर आप अपने विशाल संघ [१७ मुनिराज, २५ आर्यिकाएं, ४ क्षुल्लक एव १ क्षुल्लिका] को लेकर खानिया [जयपुर] पधारे। यहा एक आश्चर्यकारी घटना घटी। श्री वर्द्धमानसागरजी की एक वार अकस्मात नेत्रों की ज्योति चली गई थी जो कि श्री पूज्यपाद कृत शातिभक्ति के महात्म्य से पुन: प्राप्त हुई। इस प्रकार यहा भक्ति का एक अपूर्व प्रभाव सभी ने प्रत्यक्ष देखा। इस समय आप ससघ [१२ मुनिराज, १६ आर्यिका तथा ३ क्षुल्लक सहित] जयपुर शहर में वक्षीजो के मन्दिर मे चातुर्मास कर रहे है। चातुर्मास में वहुत ही धर्म प्रभावना हो रही है। यहा आप ही की प्रेरणा से 'श्री शाति-वीर दिगम्वर जंन गुरुकुल' की स्थापना हुई है। दि. १७ ६.१९६९ को व्र शान्तिवाई मुज्जफरनगर की आर्यिका दीक्षा आपके ही कर कमलो से हुई। जयपुर जैन समाज के इतिहास में यह विशाल दीक्षा समारोह का प्रथम मौका था। इसी प्रकार सारे सव को उपस्थिति में समस्त जेन समाज ने मिलकर क्षमावणी पर्व बहुत ही शानदार ढग से मनाया।

इसी प्रकार आप पृथ्वी पर चिरकाल तक जगत के प्राणियो का कल्याण करते हुए जयशील रहे। ऐसी भावना भाते हुए मै पुन. पुनः आपके चरणो में सविनय नमोस्तु अर्पण करता हूं।

प० पू० १०८ आचार्य कल्प श्री श्रुतसागरजी महाराज

जन्म—
बीकानेर (राज०)
वि० सं० १९६२
फाल्गुण कृष्णा अमावस्या
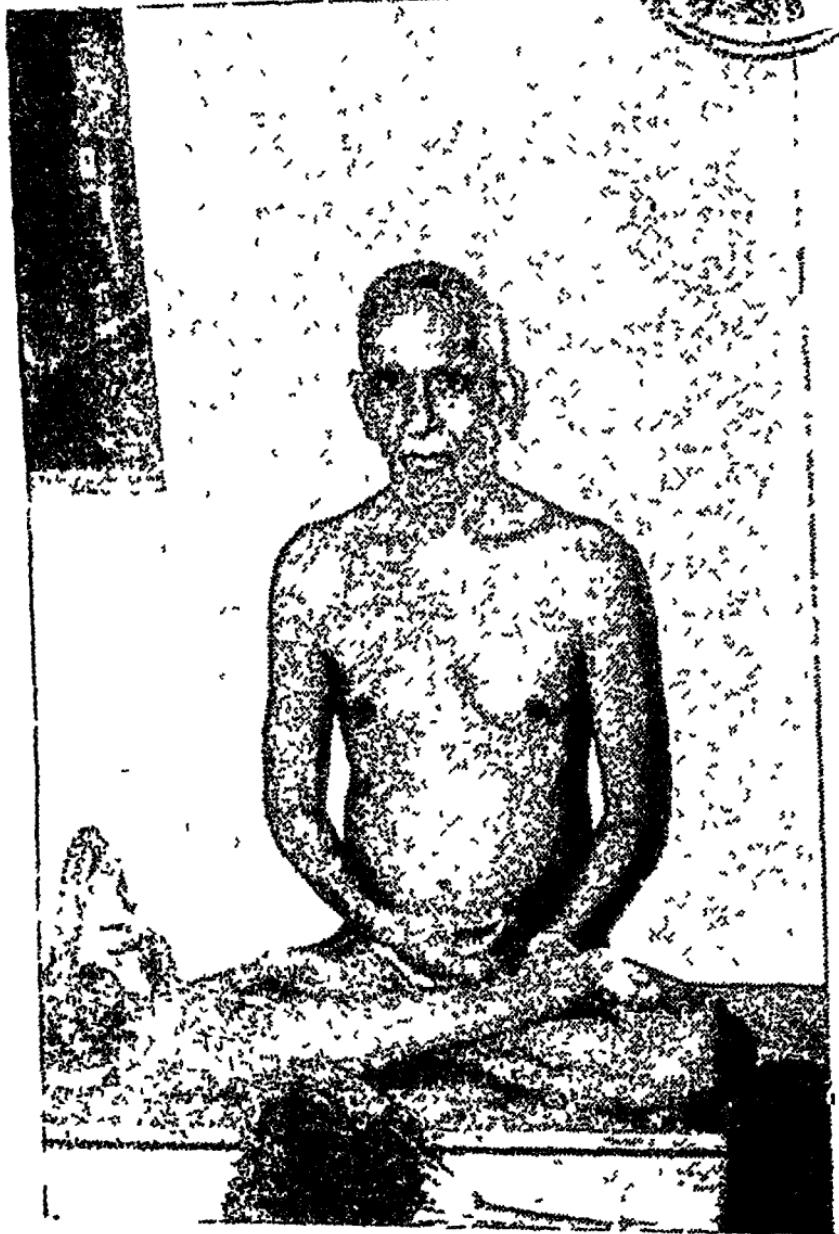
दीक्षा गुरु—
आ० श्री वीरसागरजी
महाराज

दीक्षा स्थान—
खानिया (जयपुर)
वि० सं० २०१४
भादवा सुदी ३
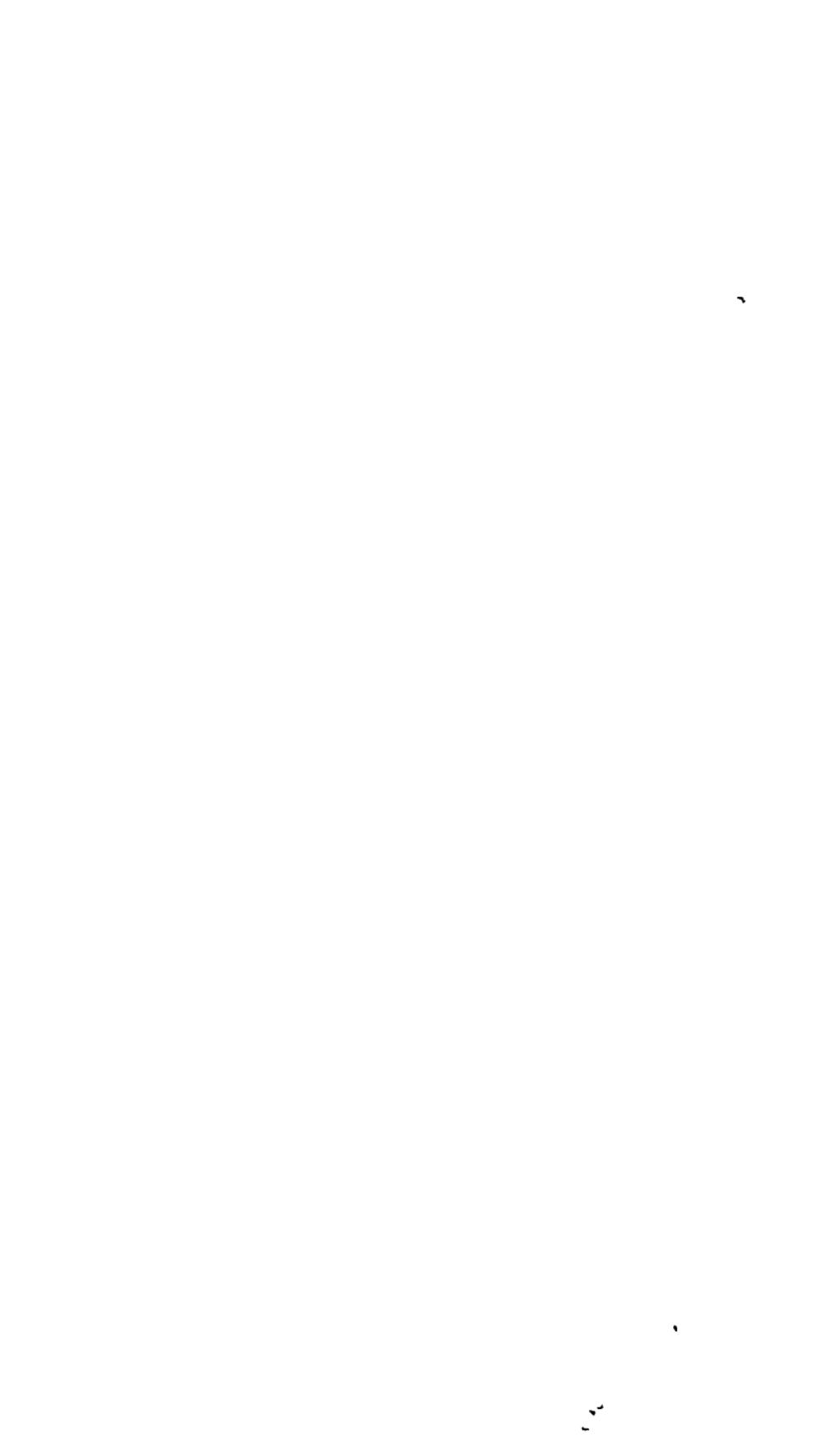
॥ श्री ॥

परम पूज्य आचार्यकल्प श्री श्रुतसागरजी महाराज का

जीवन-परिचय

राजस्थान के प्रसिद्ध शहर बीकानेर में फाल्गुन कृष्णा ३० स. १९६२ में भावक [ओसवाल] गोत्रोत्पन्न श्रीमान सेठ छोगमलजी की धर्मपत्नो श्रीमती गज्जोबाई की कुक्षी से आपका जन्म हुआ था। आपका नाम गोविन्दलाल रखा गया परन्तु इकलौते लाडले पुत्र होने से फागूलालजी भी कहते थे। आपके पिता कपड़े के व्यापारी थे। आपसे बड़ी एक बहिन धर्मनिष्ठा श्रीसोनुबाईजी है। प्रारभ में आपके पिता मुंहपट्टी वाले श्वेताम्बर आम्नाय के कट्टर अनुयायी थे। पुण्य के योग से आपको माताजी श्वेताम्बर आम्नाय के बजाय दिगम्बर आम्नाय के प्रति अटूट श्रद्धा रखने लगी। माता के पश्चात आपके पिता श्री की भी दिगम्बरत्व के प्रति अगाढ निष्ठा हो गई। लगभग १७ वर्ष की अवस्था में आपका विवाह बीकानेर निवासी कलकत्ता प्रवासी सेठ श्री जुगलकिशोरजी की योग्य सुपुत्री श्रीमती बसन्तीबाई से सम्पन्न हो गया। आपके सुयोग्य तीन पुत्र श्री माणिकचंदजी, श्रीहीरालालजी, एवं श्रीपदमचंदजी

तथा तीन पुत्रिय श्रीमती अमरावबाई, श्रीमती ममोलबाई व सबसे छोटी पुत्री सुश्री सुशीला है जो कि वर्तमान मे आर्यिका श्रीज्ञानमती माताजी के पास में सघ में रहकर धर्माध्ययन कर रही है साथ ही आजीवन ब्रह्मचर्य का व्रत धारणकर दो प्रतिमा के व्रतो का पालन करती है। आप कलकत्ता में 'छोगालाल गोविन्दलाल' के नाम से कपड़े का व्यवसाय करते थे। पिता श्री के स्वर्गस्थ हो जाने से आपके मन मे ससार की असारता उद्भूत हुई। अत: आप ४० वर्ष की युवावस्था में ही आजीवन ब्रह्मचर्यव्रत धारणकर धर्माध्ययन मे काल व्यतीत करने लगे। सं. २०११ में टोडारायसिंह (जयपुर राज.) में आचार्य श्री वीरसागरजी महाराज से ७ वी प्रतिमा के व्रत धारण किये। ४ माह उपरात ही यही पर कार्तिक सुदी १३ को आचार्य श्री से ही क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण की। दीक्षोपरांत संघ में ही साथ रहकर अध्ययन करते हुए स. २०१४ में भादव सुदो ३ को खानिया (जयपुर) मे आचार्य श्रीवीरसागरजी से ही दिगम्बर मुनि दीक्षा अङ्गीकार की। आपकी धर्मानुरागिणी पत्नी भो ७ वी प्रतिमा के व्रतों का पालन करते हुए पू. आ. श्रीज्ञानमती माताजी के पास सघ मे रहकर आत्मकल्याण के लिए अग्रसर हैं।

आचार्य श्री वीरसागरजी महाराज के आप अन्तिम मुनि शिष्य है। आपकी दीक्षा के सिर्फ २७ दिन बाद ही आचार्य

श्रीवीरसागरजी महाराज को समाधि हो गई। आपने मुनि दीक्षा के बाद आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज के सघ में सदैव रहकर धर्मप्रचार करते हुए निम्न स्थानो पर चातुर्मास किये :—

स. २०१५—ब्यावर
सं २०१६—अजमेर
स. २०१७—सुजानगढ़
स. २०१८—सीकर
सं. २०१९—लाडनूं
सं. २०२०—खानिया (जयपुर)
सं. २०२१—पपोराजी
सं २०२२—श्रीमहावीरजी
स. २०२३—कोटा
स २०२४—उदयपुर
स २०२५—प्रतापगढ

वर्तमान में टोडारायसिंह में आप ४ मुनिराज (श्री भव्यसागरजी, श्री अजितसागरजी, श्री सुबुद्धिसागरजी तथा श्री यतीन्द्रसागरजी) एव ८ आर्यिकाएं (श्री चन्द्रमतीजी, राजमतीजी, विशुद्धमतीजी, सूर्यमतीजी, कनकमतीजी, सन्मतीजी, धन्यमतीजी एव विनयमतीजी) सहित चातुर्मास कर रहे है जिससे महती धर्म प्रभावना हो रही है ।

आप अहर्निश आचार्य श्री शिवसागरजी के साथ में ही रहकर सघ सचालन आदि मे मंत्रीवत् सहयोग देते हुए दाये हाथ के समान रहे । आपकी कुशलता एव वात्सल्य भाव के फलस्वरूप ही सघस्थ सभी साधू एव श्रावकादि हमेशा संतुष्ट

रहे तथा वात्सल्य रूप एक सूत्र मे बधे रहे। आपके उच्च तथा दूरदर्शी विचारो को आचार्य श्री ने आद्योपात बहुमान दिया। पूर्ववत वात्सल्य भावों से आप उसी प्रकार सघ को दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करते हुए शतायु होकर धर्म की ध्वजा लहराते हुए ससार को कल्याण के मार्ग का दिग्दर्शन कराते रहे।

इन्ही भावनाओ के साथ आपके चरणों मे त्रिबार नमोस्तु समर्पित है।

मुनि श्री वर्धमानसागरजी

पू. श्री १०८ वर्धमानसागरजी महाराज का जन्म मध्यप्रदेश के मध्य में भूतपूर्व मध्यभारत की राजधानी इन्द्रपुरी

(इन्दौर) से ४४ मील दक्षिण में हिंदुओ के प्रसिद्ध तीर्थ ओंकारेश्वर तथा हमारे परम पावन सिद्धक्षेत्र श्री सिद्धवरकूट (जहा का प्रत्येक रजकण दो चक्री, दश कामकुमार तथा साढ़े तीन करोड़ मुनियों की मोक्ष प्राप्ति से अति पवित्र है) से ७ मील निकट निमाड़ जिले के सुप्रसिद्ध नगर सनावद मे हुआ । (सिद्धवरकूट तथा बड़वानी की यात्रा करने वालों को यही से होकर जाना पड़ता है)। पिता श्री कमलचन्दजी के लाड़ले, माता 'मनोरमाबाई' की उज्ज्वल कोख से प्रसवित होने वाले, पचो-लिया गोत्रीय, पोरवाड़ समाज के इस उदीयमान नक्षत्र का जन्म ऐसे समय में हुआ जबकि सारे देश मे सर्वत्र धर्ममय वातावरण रहता है । सन् १६५० तदनुसार सं. २००६ में

भादव शुक्ला ७ के पवित्र दिन देश को कल्याण का पथ प्रदर्शन करने वाले बालक ने जन्म लिया। इनकी माता ने पूर्व में १२ और सन्तानों को जन्म दिया था जो भाग्यवश काल के गाल मे समाविष्ट हो गये। शुभ दिनो में जन्म लेने वाले इस बालक का नाम यशवन्तकुमार रखा गया। इनके बाद एक और पुत्र हुआ जिसका नाम जैवन्तकुमार है जो कि वर्तमान मे १० वी कक्षा में अध्ययन कर रहा है। पूर्वोक्त कारणो से इनका लालन-पालन बहुत ही सावधानीपूर्वक बड़े लाड़ प्यार से किया गया। कुशाग्र बुद्धि होने से ५ वर्ष की उम्र मे ही श्री मयाचद दि० जैन प्राथमिक शाला की द्वितीय कक्षा मे प्रविष्ट कराया। क्रमश प्रतिवर्ष अच्छे अङ्क प्राप्तकर वही श्री म. दि. जैन उच्चत्तर माध्यमिक विद्यालय मे अध्ययन कर १९६६ मे हायर सेकण्डरी परीक्षा पास की। जैन स्कूल होने के नाते प्रारम्भ से ही जैन धर्म का अध्ययन अनिवार्य होने के कारण लौकिक शिक्षण के साथ साथ जैन धर्म का ज्ञान भी बराबर प्राप्त होता रहा। स्कूल के अतिरिक्त श्री महावीर दि. जैन रात्रि पाठशाला मे भी प्रारम्भिक धार्मिक शिक्षण प्राप्त किया। इसी बीच एक ऐसे दुर्दैव का सामना करना पड़ा जो कि असह्य था लाड़ले युगल सपूतों को हमेशा हमेशा के लिए छोड़कर माता परलोक प्रयाण कर गई। उस समय इनकी उम्र लगभग १२ वर्ष की थी। अत तबसे ये पिता के ही संरक्षण में पले। हायर सैकण्डरी का अध्ययन पूर्ण कर सनावद

से ३६ मील पूर्व में शहर खण्डवा में (जहां इनके मामा तथा फूफा रहते है) आई. टी. आई. में इलेक्ट्रिशियन के प्रशिक्षणार्थ प्रवेश किया। लगभग एक वर्ष के ही अध्ययन काल में ऐसी योग्यता प्राप्त की जिससे इन्हें वहा की छात्रवृत्ति मिलने लगी। वहां होस्टल के अशुद्ध खान-पान को देखकर मन में ग्लानि उत्पन्न होने से वीच सैक्शन से अध्ययन छोड़कर सनावद वापस आ गये। किन्तु अध्ययन की रुचि होने से निकटस्थ ग्राम बडवाह में डिग्री कालेज में बी. ए. पार्ट-१ में भरती हुए। वहां की पढ़ाई चल रही थी कि इधर शोलापुर चातुर्मास समाप्ति के बाद विहार करते हुए गजपंथा, मागीतुंगी, बडवानी, ऊन (पावागिरी) की यात्रा करते हुए सिद्धवरकूट के दर्शनार्थ परम सौभाग्य से परम विदुषी रत्न पू श्री १०५ आर्यिका ज्ञानमती माताजी का ससघ (२ आर्यिका एव २ क्षुल्लिकाओ सहित) मिती वैशाखवदी १, स २०२४ को मगल पदार्पण हुआ। आपके ओजस्वी वक्तृत्व एव मार्मिक उपदेश से शायद ही ऐसे कोई स्त्री पुरुष एवं बालक होगे जो आपकी मधुर वाणी से आकृष्ट न हुए हों। कुछ दिन रहकर धर्मामृत की वर्षा करते हुए सिद्धक्षेत्र श्री सिद्धवरकूट के दर्शन करती हुई इन्दौर पधारी। यहां पर श्री दि. जैन नवयुवक अनेकांत मण्डल एव महिला मण्डल सनावद के तत्वावधान मे १५ दिन के लिए शिक्षण शिविर का आयोजन किया गया था। यहा महती धर्म प्रभावना करती हुई सनावद जैन समाज के निवेदन को स्वी-

कार करके पुन सनावद पधारकर चातुर्मास स्थापना की। यहा भी दोनो मण्डलों के तत्त्वावधान में शिक्षण शिविर प्रारभ किया गया क्योकि माताजी को शुरु से ही पठन-पाठन की तीव्र रुचि रही है। मेरे (लेखक के) काकाजी के लड़के एवं पडौसी होने से मेरे साथ पठनार्थ माताजो के पास इन्होंने जाना प्रारम्भ कर दिया । और भी कई वृद्ध स्त्री पुरुषों, युवक युवतियो, बालक बालिकाओ ने अध्ययन का लाभ उठाया। माताजी की 'जन जन कल्याण की भावना की' छाप इनपर गहरी पड़ी। सर्वप्रथम परोपकारी ग्रंथ श्री पुरुषार्थसिद्ध्युपाय का अध्य-यन प्रारम्भ किया। बस! यही से इनके जीवन में एक नया मोड़ आया। माताजी ने इन्हे सर्वप्रथम यज्ञोपवीत से सस्कारित किया। प्रतिदिन मेरे साथ पठनार्थ जाने से माताजी इनकी वैराग्यमय भावनाओ के अंकुर को सदुपदेश रूपी अमृत से सीचती रहती थी। चातुर्मास समाप्ति के पश्चात जब माताजी मुक्तागिरि यात्रार्थ पधारी तब ये अपने पिताजी की अप्रसन्नता होते हुए भी सघ के साथ यात्रा को हो लिए। साढ़े तीन करोड़ मुनियो की मोक्षभूमि श्री मुक्तागिरिजी में माताजी ज्ञानमतीजी की सद्प्रेरणा से भौतिक कामनाओ को जलाजलि देते हुए आजीवन शूद्र जल त्यागकरके आहार दान दिया एवं ५ वर्ष के लिए ब्रह्मचर्यव्रत धारण किया। यहां से जीवन धर्म से ओत प्रोत हो गया। पुन. सनावद लौटकर माताजी ने प. पू. १०८ आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज के सघ में प्रवेश हेतु इन्दौर

पू० श्री १०८ वर्धमानसागरजी महाराज

जन्म—	दीक्षा गुरु—	मुनि दीक्षा—
सनावद (इन्दौर, म.प्र.)	आ. श्री धर्मसागरजी	श्री शांतिवीर नगर
सन् १९५०.वि.स. २००७	महाराज	(श्री महावीरजी)
भादवा शुक्ला ६		सन् १९६९,वि.स २०२

की ओर पुन: विहार किया, इस समय भी ये साथ ही थे। इन्दौर जैन समाज के आग्रह पर कुछ दिन सघ यहा रुका। यहां इनके पिताजी एव मामाजी इन्हें लौटाकर ले जाने के लिए आएं थे परन्तु इन्होने कहा कि—माताजी को संघ में पहुचाकर वापस आऊ गा। संघ इन्दौर से विहार करते हुए अतिशय क्षेत्र बनेडिया, बडनगर, रतलाम, सैलाना होता हुआ बासवाड़ा पहुचा। यहा से निकटवर्ती अतिशय क्षेत्र श्री अ देश्वर पार्श्व-नाथ के दर्शनोपरात ग्राम बागोदोरा (राजस्थान) में आचार्य श्रीविमलसागरजी महाराज के सघ के दर्शनों के लिए माताजी ससंघ पहुचे। वहा इनकी उत्कृष्ट भावनाओं को दृष्टिगत कर माताजी ने आचार्य श्री से इन्हे आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत दिला दिया। इस प्रकार धर्म ध्वजा लहराते हुए बागड़ प्रान्त में विहार करते हुए सलूम्बर पहुचे। यहा से ७ मील निकट ग्राम करावली मे प. पू आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज के ससंघ दर्शन कर माताजी एवं अन्य सभी के मन हर्ष से पुलकित हो उठे। सभी हर्षाश्रु रूपी गगा में निमग्न होकर आत्म विभोर हो गये। माताजी को मुक्तागिरि यात्रा कराने का एवं संघ में प्रविष्ट कराने का पूर्ण श्रेय स्व० दानवीर सेठ मयाचंदसाजी की धर्मपत्नी श्रीमतीरामकु वरबाईजी (सनावद) को है। ये यहा से गिरनारजी यात्रा के हेतु अनिच्छा होते हुए भी गये। यात्रा करके लौटकर घर १५ दिन भी न रहे। पुन: पालोदा आकर संघ में सम्मिलित हो गये। भीमपुर (जिला—डूंगरपुर,

राजस्थान) आने पर एक दिन अचानक इनके पेट मे भयंकर दर्द होने लगा। उस समय परम दयालु आचार्य श्री स्वय सघस्थ अन्य साधुओ के साथ इनका उपचार करने लगे। अमृत तुल्य वचनो से धैर्य बधाया। आचार्य श्री का यह प्रेमाशीर्वाद भविष्य में वट वृक्ष की तरह शीतलता प्रदान करने वाला हुआ। सघ मे रहकर ही इन्होने माताजी से न्याय, व्याकरण, सिद्धान्त आदि विषयो का अध्ययन आरम्भ कर दिया। साथ ही प. पू मुनिराज श्रीश्रुतसागरजी, श्री अजितसागर जी तथा श्री श्रेयाससागरजी के पास भी पढाई करते थे। इसी बीच सघ दर्शनार्थ मै (लेखक) बासवाडा आया था तब से सघ में ही रहकर माताजी ज्ञानमतीजी से अध्ययनकर रहा हूं। गतवर्ष सघ का चातुर्मास प्रतापगढ में हुआ तब मै तथा ये साथ-साथ रहकर अध्ययन में सलग्न थे। सघ प्रतापगढ़ से चातुर्मास बाद विहार करता हुवा शातिवीरनगर में होने वाली पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव में सम्मिलित होने के लिए श्रीमहावीरजी आया। यहा आचार्य श्री एवं समस्त सघ की समुपस्थिति मे प्रतिष्ठा का भण्डारोहण कार्य सम्पन्न हुआ। करीब १५ दिन बाद आचार्य महाराज ज्वर से अस्वस्थ हो गये। अस्वस्थ अवस्था में ही प्रतिष्ठा के मध्य फाल्गुण शुक्ला ८ को होने वाली दीक्षा के दीक्षार्थियों ने प्रार्थना रूप नारियल चढ़ाये। वैसे कुछ दिनो से दीक्षा लेने वालों के बारे में चर्चा, विचार-विमर्श चल रहे थे सो फाल्गुण कृ. १३ की शाम को बातचीत

के मध्य में इनकी भी मुनि दीक्षा का निश्चय हुआ प्रातःकाल की अरुणिम बेला में मुनि दीक्षा का दृढ निश्चय कर माताजी के साथ जाकर समस्त सघ की उपस्थिति में आचार्य श्री के समक्ष मुनि दीक्षा की याचना करते हुए श्रीफल चढाया। आचार्य श्री की स्वीकृति मिलने के बाद उन्ही से आज्ञा लेकर फा कृ. ३० को प्रात: श्री सम्मेदशिखर की यात्रा हेतु वहा से रवाना हुए।

लेकिन कौन जानता था कि उस महान विभूति के दर्शन पुनः नही होंगे। यात्रा जाते समय का अन्तिम आशीर्वाद था। उसी दिन दोपहर ३॥ बजे अचानक हमारे पूज्य गुरुवर्य, जगद्वद्य, प्रातः स्मरणीय आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज स्वर्गस्थ हो गये। उनके पार्थिव शरीर का दाहसस्कार श्री शातिवीर नगर में किया गया।

इसी प्रतिष्ठा में पू श्री धर्मसागरजी महाराज भी संघ सहित यहां पधारे हुए थे। अनेक प्रकार के उहापोह के बाद मिती फाल्गुण शुक्ला ८ के दिन प्रात. आचार्य पद का निर्णय होने के बाद दीक्षाओं के होने का भी निश्चय किया गया। आ० श्री शिवसागरजी महाराज की समाधि से दीक्षाओ का कार्यक्रम अनिश्चित सा हो गया था परन्तु पुनः निश्चित यकायक हो गया। दीक्षाएं डावांडोल होने से पूर्व मे इनका कोई भी उत्सव नहीं किया जा सका। दोपहर में श्री धर्मसागरजी महाराज

को समस्त सघ एव ग्राम जनता की उपस्थिति मे ग्रा. श्री शिव-सागरजी का ग्राचार्य पट्ट प्रदान किया गया। तदुपरात उसी
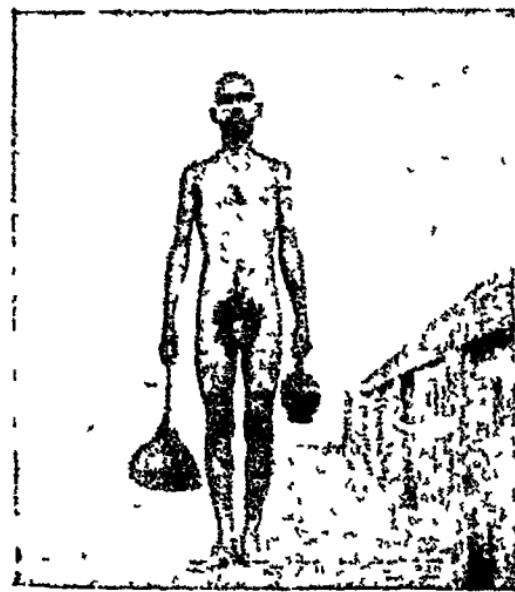
समय उन्ही के कर-कमलों से ११ दीक्षाएं (६ मुनि, २ क्षुल्लक, २ ग्रार्यिका तथा १ क्षुल्लिका) हुई। उनमें विशेष रूप से ग्रापकी भी भूरि-भूरि प्रशसा योग्य ग्रद्वितीय दीक्षा हुई।

विना किसी प्रकार पूर्व ग्रभ्यास के, विना कोई प्रतिमा व्रतादि धारण किये दीक्षा के एक दिन पहले तक भी दिन में कई वार खाते पीते, पूर्व रात्रि मे भी गद्दी पर सोये थे। न पहले कभी भी केशलोच किये थे ग्रौर न उपवासादि का ग्रभ्यास था। परन्तु ससार शरीर तथा भोगों की विरक्तता ने उपरोक्त सभी को नाकुछ समझा। वज्रनाभि चक्रवर्ती की वैराग्य भावना—

"गृह कारागृह, वनिता वेड़ी, परिजन जन रखवाले।"

का चितवन करते थे। ग्राजकल ग्राध्यात्म की थोथी

बकवास करने वाले, आत्मा और शरीर की भिन्नता की मात्र तोता रटन्त करने वाले, स्वपर भेद विज्ञान का ढिढोरा पीटने वाले, अपने को मुमुक्षु कहने वालों के मुंह पर तमाचा मारा है। इस भौतिकवाद की लपटों से बचकर सच्चे आध्यात्मवाद को धारण किया। दीक्षा विधि प्रारम्भ होते ही मुखमुद्रा पर अपूर्व प्रसन्नता लिए हुए सर्व प्रथम अपने हाथो से मूंछ और दाढी के बालो को ही उखाडना प्रारंभ कर दिया। देखते ही देखते सारे मूंछ दाढी और सिर के सम्पूर्ण बालों के बहाने ही मानो राग द्वेष को निकालकर फेक दिये। केशलोंच रूपी परीक्षा मे पूर्णतया सफल हो चुकने पर शरीर पर धारण किए हुए समस्त वस्त्राभूषण खड़े होकर ५० हजार जन समुदाय के मध्य फेककर जिस समय इस छोटे से बालक ने परम नग्न दिगम्बर जैनेश्वरी दीक्षा धारण की उस समय चतुर्थ काल का सा दृश्य उपस्थित हो गया था। सारा सभा मण्डप जयजयकार के नाद से गूंज उठा। प्रत्येक मनुष्य के नेत्र हर्षाश्रु पूरित थे। ऐसा शायद ही कोई साधु होगा जिसका दिल फूला न समाया हो। अबाल, वृद्ध, वनिताओ के मुखो से बरबस 'धन्य धन्य' शब्द निकल पड़े थे। आज से लगभग पाच सौ वर्ष पूर्व तक के इतिहास में ऐसी दीक्षा के नमूने का प्रमाण शायद नहीं मिल सकता। आचार्य श्री ने इनकी शीघ्र प्रगति देखकर एवं भविष्य में भी इसी प्रकार उन्नति की कामना से समयोचित नवीन नाम "वर्धमानसागरजी" रखा।

दीक्षा के बाद ही दृढता की परीक्षा प्रारम्भ हो गई। अंतराय आने लगे तथा व्याधि ने भी मानो उपसर्ग करना शुरु कर दिया। परन्तु आप इन सबसे जरा भी विचलित नही हुए। सघ यहां (श्रीमहावीरजी) कुछ दिन और ठहरकर विहार करके आचार्य श्री वीरसागरजो की निषद्या के दर्शनार्थ खानिया (जयपुर) आया। वैसे कुछ दिनो से आप कमजोर अवश्य थे परन्तु मिती ज्येष्ठ सुदी ५ के दिन जब बेहोश हो गये तथा कुछ देर बाद होश आने पर पसलियो में जोर का दर्द हुआ एवं तत्क्षण आखो से दिखाई देना बिल्कुल बन्द हो गया। सध्या के चार बजे का समय था। सभी साधु एव श्रावक चिंतित हो विचार-विमर्श करने लगे। प्रातः जयपुर के प्रसिद्ध डाक्टरो को दिखाकर आखो की जाच कराई, उन्होने कहा कि २४ घण्टे देखने के बाद पुनः इलाज प्रारम्भ करेंगे। जब दूसरे दिन डाक्टर आये और कोई परिवर्तन नही पाया तो उन्होने कहा कि बिना इन्जेक्शन आदि का प्रयोग किये आखों की ज्योति आना कठिन है साथ ही यह भी कहा कि यदि २४ घटे के भीतर उपचार प्रारम्भ नही किया गया तो फिर समय निकलने के बाद किया गया इलाज भी अनुपयोगी एव कठिन होगा। इस कथन से सारे संघ में चिता के मारे स्तब्धता छा गई। क्या किया जाय ? इस पर अनेक प्रकार के तर्क वितर्क विचार-विमर्श होने लगा। आचार्य श्री स्वय भी चितातुर थे परन्तु फिर भी यह कहा कि 'इस पद में रहते हुए इन्जेक्शन

आदि प्रयोग में नही लाये जा सकते ।' तब किन्हीं साधुओं का यह भी विचार रहा कि यदि समय रहते उपचार नही कराया गया । तो न साधु पद में रह सकेंगे, और न इतनी छोटी उम्र में नवदीक्षित की समाधि ही कराई जा सकती है । समय निकल जाने पर आंखों के विना गृहस्थावस्था भी अभिशाप हो जावेगा अतः दीक्षा छेदकर स्वस्थ होने पर पुनः दीक्षा दी जा सकती है । इधर इस प्रकार का कोई भी निर्णय करने में हरएक का दिल कापता था कि उधर इनके कान पर जब डाक्टर की विचार-धारा पड़ी तो इन्होंने निःसकोच कह दिया कि यदि प्रसंग आवे संल्लेखना ले लूंगा परन्तु मै इन्जेक्शन आदि नहीं लगवाऊंगा । विकट स्थिति जानकर मन में विचार किया कि इस समय जिनेन्द्र भगवान ही शरणभूत है ऐसी दृढ़ श्रद्धा मन में आते ही भगवद् भक्ति का स्रोत उमड़ पड़ा और पास में बैठे हुए साधुओं से ऊपर मन्दिर में भगवान के समक्ष ले चलने के लिए आग्रह-पूर्वक कहा । इस समय शाम के ५ बजे थे । अतः किन्ही का कहना हुआ कि इतनी तेज धूप में से जाना ठीक नहीं है । इस पर पूज्य श्री श्रुतसागरजी महाराज एवं श्री ज्ञानमती माताजी ने कहा कि यदि इनकी भावना है तो अवश्य ले जाना चाहिये । इस समय तक आंखों की रोशनी जाने को ४६ घण्टे बीत चुके थे । ज्योही इन्हे भगवान के समीप लाया गया भगवान-चदाप्रभु के चरणो मे मस्तक रखकर आचार्य श्री पूज्यपाद रचित शांति-भक्ति' 'न स्नेहाच्छरणं प्रयांति भगवन् !......इत्यादि का पाठ

करना प्रारम्भ कर दिया। फिर क्या था? सभी साधु एक एक कर भक्ति गगा में बहने लगे। पू. श्री अभिनन्दनसागरजी महाराज ने भक्ति एवं वात्सल्य का बेमिशाल नमूना सामने रखा। उन्होने कहा कि 'जब तक इनके नेत्रो में पुनः ज्योति नही आती तब तक मेरे षट्रस का त्याग है साथ ही श्रीसंभव-सागरजी महाराज भी भक्ति मे ऐमे निमग्न हो गये कि उन्होने अपनी अस्वस्थता की बिल्कुल भी चिंता और कष्ट महसूस नही किया। प्रत्येक साधु 'मुनिधर्म पर आये हुए इस संकट का किस प्रकार निवारण हो?' इस चिंतवन मे लवलीन थे। इधर भक्ति पाठ हो रहा था उधर हमारे वयोवृद्ध महान विचारक पूज्य श्री श्रुतसागरजी महाराज पुत्र वात्सल्य में गोते लगाते हुए इनके भविष्य का विचार करके करुणार्द्र हो रहे थे कि इतनी अल्पावस्था में कितनी दृढतापूर्वक महान त्याग और इतना जबर्दस्त उपसर्ग! वही ससार समुद्र से पार उतारने वाली विद्या प्रदान करने वाली सच्ची माता पू. श्री ज्ञानमतीजी भक्ति मे तन्मय होकर भगवान के समक्ष अपने भावो को इन शब्दों में व्यक्त करते हुए बार बार यही कहती थी कि—

'हे भगवन्! आप बड़े है कि डॉक्टर!—

इसी प्रकार और भी प्रभु गुणगान करती हुई मौनस्थ एवं अपनी शक्ति से भी अधिक श्रम पूर्वक सक्रिय भक्ति से

श्री १००८ भगवान चन्द्राप्रभू की चरण शरण में

सानिया— जिनालय मे मिती जेष्ठ शुक्ला ७ संम्वत् २०२६ को

भक्तिरत- मुनि श्री वर्धमानसागरजी

ओतप्रोत हो रही थी। भक्ति का ऐसा तांता लगा हुआ था कि किसी को कुछ भी खबर ही नहीं थी। माताजी के साथ श्री जिनमतीजी, आदिमतीजी विशुद्धमतीजी आदि सभी आर्यिकाएं चौबीस घण्टे का नियम लेकर उच्च स्वर से सुमधुर कण्ठ ध्वनि से भक्ति पाठ कर रही थी। साधु ही नही व्रती और श्रावक गण भी उस समय भक्ति से अछूते नहीं रहे। उस समय मैं तो 'किंकर्तव्य विमूढ सा' हो रहा था। कभी भक्ति में सम्मिलित होता तो कभी विचार विमर्श की गोष्ठी में। सारी खानिया का वातावरण भक्तिमय हो गया था। तीन घण्टे की भक्ति का ऐसा अद्भुत प्रभाव हुआ कि ५२ घण्टे से गई हुई नेत्र ज्योति पुनः ज्यो की त्यो प्राप्त हो गई। यह वही शाति-भक्ति है जिसे श्री पूज्यपाद आचार्य ने तब बनाई थी जबकि स्वयं आचार्य देव की आकाश मार्ग से गमन करते समय सूर्य की उष्णता से नेत्र ज्योति चली गई थी तथा इसकी रचना करते हुए ही पुन. नेत्र ज्योति प्राप्त हुई थी। उस समय के हर्ष का वर्णन करना अकथनीय है। सभी पुलकित हो उठे। क्या महाराज, क्या माताजी, क्या श्रावक सभी खुशी से झूम उठे। धर्म की जयजयकार हो गई। सभी साधुओं के एव माताजी ज्ञानमतीजी के मुखारविंद से बरबस ही यह शब्द निकल पड़े कि हमने दीक्षित जीवन मे ही क्या पूरी उम्र में न तो ऐसी भक्ति की और न देखी। ज्योति प्राप्त होने के बाद भी भक्ति पाठ ज्यो का त्यो उत्साहपूर्वक सारी रात तथा दूसरे

दिन सध्या ५ बजे तक बराबर अखण्ड रूप से चलता रहा। प्रात सभी साधु इन्हे साथ लेकर घाट के दोनो मन्दिरो के दर्शनार्थ पधारे थे। इस समय संघ मे निम्न साधु उपस्थित थे :-

१. प पू. आचार्य श्री १०८ धर्मसागरजी महाराज

२.	श्री श्रुतसागरजी	३	श्री अजितसागरजी
४.	श्री ऋषभसागरजी	५.	श्री सुपार्श्वसागरजी
६	श्री श्रेयाससागरजी	७.	श्री बोधिसागरजी
८.	श्री निर्मलसागरजी	९.	श्री सयमसागरजी
१०	श्री दयासागरजो	११.	श्री सुबुद्धिसागरजी
१२.	श्री महेद्रसागरजी	१३.	श्री अभिनन्दनसागरजी
१४,	श्री सभवसागरजी	१५.	श्री शीतलसागरजी
१६,	श्री यतीन्द्रसागरजी	१७.	श्री वर्धमानसागरजी

आर्यिकाएं

१८	श्री वीरमतीजी	१९.	श्री शातिमतीजी
२०.	श्री वासमतीजी	२१.	श्री ज्ञानमतीजी
२२.	श्री चद्रमतीजी	२३.	श्री पद्मावतीजी
२४.	श्री नेमिमतीजी	२५.	श्री जिनमतीजी
२६.	श्री राजुलमतीजी	२७.	श्री सभवमतीजो
२८.	श्री आदिमतीजी	२९.	श्री विशुद्धमतीजी
३०.	श्री सूर्यमतीजी	३१.	श्री अरहमतीजी
३२.	श्री श्रेयासमतीजी	३३.	श्री कनकमतीजी

३४.	श्री भद्रमतोजी	३५.	श्री कल्याणमतीजी
३६.	श्री सुशीलमतीजो	३७.	श्री सन्मतोजो
३८.	श्री धन्यमतीजी	३९.	श्रीविनयमतीजी
४०.	श्री श्रेष्ठमतोजी	४१.	श्री अभयमतीजी
४२	श्री गुणमतीजी	४३.	क्षु श्री योगींद्रसागरजी
४३.	क्षु श्री भूपेन्द्रसागरजो	४५	क्षु श्री गुणसागरजो
४६.	क्षु श्री बुद्धिसागरजी	४७.	क्षुल्लिका श्री विद्यामतीजी

इस प्रकार ४७ साधुग्रों का एक विशाल सघ वहा विराजमान था । कुछ दिन यहा ठहरकर संघ बक्षी जी के मदिर मे रुका । बीच मे कुछ दिन खजाची की नशिया में रहकर पुन बक्षी जो के मन्दिर में आकर चातुर्मास की स्थापना की । चातुर्मास सानन्द सम्पन्न हो रहा है । बीच में यहा भी १८ दिन तक गले से आवाज नही निकली थी । प्रारम्भ से भी अ तरायों की बहुलता तो रही ही साथ में शारीरिक व्याधियो से भी बहुत कष्ट आये परन्तु फिर भी चारित्र में किसी भी प्रकार से शिथिल नही हुए पूर्ण दृढता से धैर्यपूर्वक सहनकर दुनियावालों को दिखा दिया कि आज भी मुनि धर्म का अक्षुण रीति से पालन हो रहा है। शरीर पर जब जब भो व्याधिजन्य तकलीफे आई उनका निवारण भगवद् भक्ति से ही हुआ । वेद्य को औषधियाँ तो नाम मात्र काम करती थी । इस प्रकार स्वस्थ होने पर सदैव हो ध्याना-

ध्ययन में सलग्न रहते हुए अपनी आत्मा का कल्याण करने मे तत्पर है।

हम यह भावना भाते है कि आप नाम के अनुसार ही गुण, विद्या, बुद्धि, तप मे अहर्निश वर्द्धिगत होते हुए दुनिया मे जैन धर्म का प्रसार करते रहे।

पू० १०५ आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी

जन्म—	क्षु. दीक्षा गुरु—	आर्यिका दीक्षा गुरु—
टिकैतनगर [लखनऊ उ.प्र.]	आ. र. श्री देशभूषणजी महाराज	आ. श्री वीरसागरजी
सन् १९३४ वि.स. १९९१	वि स० २००९ चैत्र कृ. १	महाराज
आसोज शु० शरदपूर्णिमा		वि.स. २०१३ वैसाख कृ २

।। श्री ।।

पू. श्री १०५ ज्ञानमती माताजी का

जीवन-परिचय

पू श्री १०५ विदुषी आर्यिका ज्ञानमती माताजी का जन्म उत्तरप्रदेश के प्रसिद्ध नगर लखनऊ से ५० मील तथा बाराबकी से ३२ मील दूर टिकैतनगर में हुआ था। आपके पिता श्री छोटेलालजी एव माता मोहनीबाई है। आपका जन्म अग्रवाल समाज के गोयल गोत्रीय परिवार में स. १९९१ में आसोज सुदी १५ (शरद पूर्णिमा) के दिन हुआ। आपका नाम कु.मैना रखा गया। आपके पिताजी कपडे का व्यापार करते है। आपअपने माता-पिता की सवप्रथम सन्तान है। आपके बाद आपके ४ भाई व ८ बहिने है। जैसें माता-पिता होते है वैसी ही उनको सन्तान होती है। आपमें बचपन से ही धार्मिक रूचि थी। प्राथमिक अध्ययन करने के साथ-साथ धार्मिक अध्ययन भी किया। ग्यारह वर्ष की अवस्था में पाठशाला की पढाई बन्द हो गई। परन्तु फिर भी धर्माध्ययन बराबर करती रही।

छोटी उम्र होते हुए भी कुछ ऐसे प्रकरण तथा कारण उपस्थित हुए जिससे आपके दिल में वैराग्य का समावेश हो गया। लगभग १० वर्ष की आयु में पार्श्वनाथ दि. जैन पाठशाला

मे एक बार अकलंक निकलंक नाटक देखा । उसमें एक दृश्य चित्ताकर्षक था जिसमें विवाह के बारे में अकलंक अपने पिता से कहते हैं कि 'कीचड़ में पैर रखकर धोने की अपेक्षा न रखना ही श्रेयस्कर है।' तदनुसार विवाह करके पुनः दीक्षा लेने के बजाय अविवाहित रहकर दोक्षा लेना उचित है। येविचार आपके दिल में घर कर गये। योग्य वर देखकर आपकी अरुचि होते हुए भी सगाई कर दी गई परन्तु आपको बन्धनयुक्त जीवन-यापन करना इष्ट नही था । अतः आपने विवाह करने से इन्कार कर दिया।

सौभाग्य से वहा आचार्यरत्न श्री देशभूषणजी महाराज का पदार्पण हुआ । इससे आपकी भावनाए और अधिक बलवती हो गई । यहा से आचार्य श्री बाराबकी पधारे और वही चातुर्मास किया। चातुर्मास के अन्तर्गत एक दिन आप अपने लघुभ्राता कैलाशचन्दजी को लेकर दर्शनार्थ पहुची। आपके माता पिता का विरोध होते हुए भी कुछ दिन वही ठहर गई । एक दिन आचार्य श्री के केशलोंच के दिन स्वयमेव दीक्षा की याचना करते हुए अपने हाथो से केशलोच करना प्रारभ कर दिया किन्तु इतनी छोटी उम्र होने के कारण, जनता का भयकर विरोध होने से उस दिन कुछ भी नही हो सका अत· आप चतुर आहार का त्याग करके भगवान की शरण में जाकर बैठ गईं । दूसरे दिन प्रात. सप्तम प्रतिमा के व्रत धारण कर आजीवन गृह परित्याग कर दिया। यह दिन भी आसोज सुदी

१५ (शरद पूर्णिमा) का था। इस समय आप पूरे १८ वर्ष की हो चुकी थी।

चातुर्मास बाद महाराज जी के साथ ही विहार करके श्री महावीरजी आई । यहा मिती चैत्रवदी १ सं० २००६ के दिन प्रात:काल की मंगल वेला में आचार्य श्री देशभूषणजी से क्षुल्लिका दीक्षा ग्रहण की । यहां से पुन: विहार करके सं० २०१० का प्रथम चातुर्मास महाराजजी के साथ ही अपनी जन्म-भूमि टिकैतनगर में किया। यहा लगभग ४०-४५ घर अग्रवाल जैनों के ही है। एक विशाल जैन मन्दिर है।

सं० २०११ में द्वितीय चातुर्मास आचार्य श्री देशभूषणजी के साथ ही जयपुर शहर में किया। उस समय आप पाटोदीजी के मन्दिर में तथा महाराजजी छोटे दीवानजी के मदिर में ठहरे थे। तृतीय चातुर्मास सं० २०१२ में क्षु.विशालमतीजी के साथ म्हसबढ़ (जिला सातारा, महाराष्ट्र) में किया । यहां आपने सौभाग्य-वती सोनूबाई (वर्तमान आ. पद्मावतीजी) को ६ठी प्रतिमा के तथा २० वर्षीय कु. श्री प्रभावतीजी (वर्तमान आ. जिनमतीजी) को १० वी प्रतिमा के व्रत देकर साथ में लिया। इस चातुर्मास के मध्य आप आ. श्री शातिसागरजी महाराज की समाधि के समय दर्शनार्थ कुंथलगिरी पधारी थी। उन्ही की आज्ञा के अनुसार चातुर्मास उपरात आ. श्री वीरसागरजी महाराज के सघ में आकर माधोराजपुरा (जयपुर, राजस्थान) में मिती

वैशाख कृ २ सं० २०१३ को आर्यिका दीक्षा अङ्गीकार की। आपके साथ ही श्री जिनमतीजी की क्षुल्लिका दीक्षा हुई। इस प्रकार आपने आचार्य श्री वीरसागरजी महाराज के सघ मे रहकर स० २०१३ तथा २०१४ में खानिया (जयपुर) मे चातुर्मास किये। स० २०१४ के चातुर्मास में आसोज बदी अमावस्या को आचार्य श्री की समाधि से उनकी छत्रछाया उठ गई। चातुर्मास बाद नवीन आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज के साथ विहार करके गिरनार यात्रा के बाद स० २०१५ मे ब्यावर स० २०१६ में अजमेर, सं० २०१७ मे सुजानगढ, स० २०१८ मे सीकर तथा स० २०१९ मे लाडनू चातुर्मास किये। सभी स्थानो पर अपूर्व धर्म प्रभावना हुई। सीकर चातुर्मास मे ७ दीक्षाए विशाल समारोहपूर्वक हुई। उनमे आप ही के पास रहने वाली अजमेर की ब्र अ गूरीबाई तथा क्षु जिनमतीजी की आर्यिका दीक्षा तथा फतेहपुर की ब्र. रतनबाई को क्षुल्लिका दीक्षा विशेष रूप से स्मरणीय है। अ गूरीबाई का नाम आ. आदिमतीजी तथा रतनबाई का नाम श्रेयास मतीजी रखा गया।

लाडनू चातुर्मास के बाद जयपुर के लिए विहार करते हुए मार्ग में नावा (कुचामन) से आप मिती पोष बदी ५ सं. २०१९ को तीर्थराज श्री सम्मेदशिखरजी की यात्रा के हेतु आचार्य श्री से आज्ञा लेकर साथ में आ. श्री पद्मावतीजी, जिनमतीजी,

आदिमतीजी तथा क्षु. श्रेयासमतीजी को साथ लेकर आगरा, लखनऊ, कानपुर, बनारस आदि छोटे बड़े गावो तथा शहरों में धर्म ध्वजा फहराती हुई आर्यिका दीक्षा के बाद पहली बार (जन्मभूमि) टिकैतनगर पहुची । यहा कुछ दिन ठहरकर तीर्थ-राज सम्मेदशिखर दर्शनार्थ पधारीं । यहा से कलकत्तावासियो के आग्रह पर विहार करके कलकत्ता चातुर्मास किया । यहा के चातुर्मास से महती धर्म प्रभावना हुई । चातुर्मास उपरान्त पुनः सम्मेदशिखरजी पहुंचकर नदीश्वर की प्रतिष्ठा देखी । तदुपरांत यहां से पुरलिया, कटक, खंडगिरि उदयगिरी की यात्रा करके विशाखापट्टनम, बीजवाडा, अनकापल्ली आदि स्थानों का भ्रमण करते हुए सं० २०२१ में हैदराबाद चातुर्मास किया यहा पर आपकी उपस्थिति में कई विधान हुए । श्रावकों ने तन, मन व धन से खूब धर्म प्रभावना करते हुए स घ की अपार भक्ति की । यहा आपकी बहिन बाल ब्र० मनोवतीबाई को आ० श्री शिवसागरजी महाराज की आज्ञा से विशाल आयोजनपूर्वक आपने क्षुल्लिका दीक्षा प्रदान की । यहा से आप विहार करके भ्रमण करती हुई महान अतिशय क्षेत्र श्री बाहुबलीजी (जैन बद्री) श्रवण बेलगोला पहुँची । स० २०२२ का चातुर्मास यही किया । यहा भगवान बाहुबली की ५७ फुट उत्तङ्ग विशाल प्रतिमा की भक्ति में तन्मय होकर भगवान बाहुबली की स्तुति संस्कृत में ५१ पद्यों में तथा हिंदी में १११ पद्यों में बनाई । चातुर्मास सहित आगे पीछे मिलाकर लगभग १ वर्ष यहां

रहकर कानड़ी भाषा का गहन अध्ययनकर और भी कई रच-
नाए बनाई। यहा से विहारकर धर्मस्थल, वेणूर, मूढविद्री,
कारकल, वराग, कुन्दकुदाद्रि, हुम्मच आदि तीर्थोके दर्शन करती
हुई हुबली, बीजापुर होती हुई श्रीमती प. सुमतिबाईजी शाह के
आग्रह पर शोलापुर पधारी । स० २०२३ का यह चातुर्मास
आपने बाईजी के आश्रम में ही किया। इसी वर्ष शहर मे आ०
श्री विमलसागरजी महाराज का भी ससंघ चातुर्मास हुआ।
यहा भी आपके सदुपदेशो से खूब ही प्रभावना हुई। आनन्दपूर्वक
चातुर्मास समाप्ति के पश्चात् श्री गजपथा, मागीतुंगी, बड़वानी
ऊन (पावागिरि) की वन्दना करते हुए श्री सिद्धवरकूट के
दर्शनार्थ सनावद पधारी। यहा से सिद्धवरकूट ७ मील तथा
उत्तर मे इन्दौर से ४४ मील दूर है । यहा कुछ दिन ठहरकर
श्री सिद्धवरकूट के दर्शन करके इन्दौर पधारी। यहा से सनावद
वालो के अति आग्रह पर पुनः लौटकर स० २०२४ का चातु-
र्मास सनावद मे किया। यहा के पोरवाड़ जातीय, पचोलिया
गोत्रिय श्री कमलचन्दजी के १९ वर्षीय सुपुत्र श्री यशवन्तकुमार
ने आपके सदुपदेशो से प्रभावित होकर आपके ही पास अध्ययन
करने लगे । चातुर्मास बाद आप ससघ श्री मुक्तागिर जी
पधारी। सनावद लौटकर आ० श्री शिवसागरजी महाराज
के सघ में पुनः सम्मिलित होने के लिए इन्दौर की ओर गमन
किया। वहा से अतिशय क्षेत्र बनेड़ियाजी के दर्शन करते हुए
बड़नगर, रतलाम, सैलाना होते हुए बासवाडा पहुँची। यहा

आपके उपदेश से प्रभावित होकर स्थानीय श्रेष्ठी श्री पन्ना-लालजी तराटीने अपनी १२ वर्षीय सुपुत्री चि. कला को ५ वर्ष के लिए अध्ययनार्थं माताजी को सौप दी। उसी समय उसे ५ वष का ब्रह्मचर्य व्रत भी दिया । यहां से आप अंदेश्वर पार्श्वनाथ के दर्शन करते हुए मार्ग में आ. श्री विमलसागरजी के ससघ दर्शन करते हुए सलूम्बर पधारी। यहाँ से आचार्य श्री शिवसागरजो का सघ ७ मील दूर ग्राम करावली में विराजमान था। उस समय सघ में ३४ साधु थे। आपके वहा पहुँचने पर ४० साधु हो गये । सघ दर्शन से हम सभी का मन गद्गद हो गया। आपको मुक्तागिरि यात्रा कराने का तथा सघ तक पहुँचाने का पूर्ण श्रेय स्व दानवीर सेठ श्री मयाचन्दसाजी की धर्मपत्नी श्री रामकुंवरबाईजी (सनावद) को है।

संघ सलुम्बर आया। वहां के श्रावको ने खूब भक्ति की। आपके पास रहने वाली क्षु. श्रेयांसमतीजी की आर्यिका दीक्षा एव क्षु. सुबुद्धिसागरजी की मुनि दीक्षा यही पर विशाल जन समुदाय के मध्य हुई। कुछ दिन यहा ठहरकर धर्म प्रभावना करते हुए सघ सावला, पालोदा, लोहारिया, भीमपुर आदि स्थानों पर भ्रमण करता हुआ बांसवाड़ा आया । यहा से विहार करके घाटोल, खमेरा, नरवाली, मुंगाना से अ. क्षेत्र शांतिनाथ होता हुआ प्रतापगढ पहुँचा। जव संघ वासवाड़ा था तब मैं साघ के दर्शनार्थ आया था। उस समय से पुन घर नही गया एव सघ मे ही रहकर माताजी से शास्त्री कोर्स का अध्य-

यन कर रहा हू । प्रतापगढ में श्रावकों के अत्यधिक आग्रह पर सं० २०२५ मे समस्त सघ का यही चातुर्मास हुआ । यहाखूब धर्म प्रभावना हुई । ध्यानाध्ययनपूर्वक आनन्द से चातुर्मास समाप्त कर विहार करके श्री शाँतिवीर नगर में होने वाली यच कल्याणक प्रतिष्ठा में सम्मिलित होने हेतु भवानीमण्डी, रामगजमण्डी, कोटा होते हुए श्री महावीरजी आये । यहा आचार्य श्री एव समस्त सघ की उपस्थिति में प्रतिप्ठा के शुभारम्भ में झण्डारोहण हुआ ।

कुछ दिन बाद आ० श्री शिवसागरजी महाराज को बुखार आने लगा । छः-सात दिन के बुखार से ही वे अत्यधिक कमजोर हो गये । सभी चिंतित थे । इसी बीच प्रतिष्ठा महोत्सव मे सम्मिलित होने हेतु श्री धर्मसागरजी महाराज भी अपने सघ सहित पधार गये थे । खुशी में एक वज्रपात हुआ । समस्त दिगम्बर जैन समाज के आलोक का दीप्तमान सितारा मिती फाल्गुण कृ० ३० को अस्त हो गया । आ श्री शिवसागरजी महाराज की सामान्य रुग्णावस्था मे अचानक समाधि हो गई । अतः मिती फा. शु ८ को परम्परा-गत आचार्य पट्ट धीर, वीर, वयोवृद्ध मुनिराज श्री धर्मसागरजी महाराज को सौपा गया । उसी दिन आपके कर कमलो से ११ दीक्षाए (६ मुनि, २ आर्यिका, २ क्षुल्लक तथा १ क्षुल्लिका) सम्पन्न हुई । उनमे आपकी बहिन क्षु अभयमतीजी की आर्यिका दीक्षा के अलावा विशेष रूप से उल्लेखनीय सनावद

(मध्यप्रदेश) निवासी १९ वर्षीय नवयुवक श्री यशवन्तकुमार पचोलिया की मुनि दीक्षा थी। जो कि आपके सनावद चातुर्मास से आपही की सद्प्रेरणा से संघ में आपके पास रहकर अध्ययन करते थे। दीक्षा से पूर्व न तो केशलोच का अभ्यास था, न कोई प्रतिमा थी, न व्रत उपवास किये थे। न गद्दी-तकिये का त्याग था, न दिन में खाने-पीने की कोई पाबन्दी थी। बावजूद इन सबके एकदम सीधी मुनि दीक्षा धारण की।

नंतर महावीर जयंति के पावन अवसर पर आ० श्री विमलसागरजी महाराज श्री ससघ यहा पधारे थे। उस समय साधु सघो का अभूतपूर्व सम्मेलन हुआ। लगभग ७२ साधुओं का एक महान विशाल समुदाय एकत्रित हुआ था।

यहा से संघ विहार करके बामनपुरी, दौसा होता हुआ आ० श्री वीरसागरजी महाराज की निषद्या के दर्शनार्थ खानिया (जयपुर) आया। यहां रहते हुए पूज्य श्री वर्धमानसागरजी की अचानक नेत्र ज्योति चली गई थी जो ५२ घण्टे बाद आ. श्री पूज्यपाद रचित 'शाति भक्ति' के पाठ से पुनः प्राप्त हुई। इस प्रकार भक्ति का एक आश्चर्यजनक माहात्म्य प्रत्यक्ष देखा गया। यहा से सघ शहर में आकर कुछ दिन बक्षी जी के मन्दिर में तथा खजांची की नशिया में ठहरकर पुनः बक्षीजी के मन्दिर में आया और यही चातुर्मास की स्थापना की। इस चातुर्मास में आपके पास रहने वाली ब्र. शातिबाई (मुजफ्फर-

नैनार) की आर्यिका दीक्षा विशाल समारोहपूर्वक बहुत ही धूमधाम से मिती भादवा सुदी ६ को सम्पन्न हुई। अध्ययन अध्यापन करते हुए सघ मे आपका शातिपूर्वक काल व्यतीत हो रहा है।

जैसो आपकी आरम्भ से ही स्व पर कल्याण की भावना रही है। तदनुसार आपने अपने १५ वर्ष के दीक्षा काल मे उल्लेखनीय कार्य किए। आपके हर चातुर्मासो एव विहार स्थानो मे ऐसी विशेषताए रही है जो वहा वालो को चिरस्मरणीय रही है तथा रहेगी। आपने बहुतो को ससार समुद्र में डूबने से बचाया। आर्यिका पद्मावतीजी, आर्यिका जिनमतीजो, आ॰ श्री आदिमतीजी, आ श्री श्रेष्ठमतीजो, आ॰ श्रो अभयमतीजी तथा आ॰ श्री जयमतीजो को आपने ही सद्प्रेरणा देकर सन्मार्ग पर लगाया। दीक्षा ही नही दिलाई, साधारण ज्ञान को प्राप्त श्री जिनमतीजो को पढाकर आज शास्त्री से भी ऊपर का ज्ञान कराकर समकक्ष का बना लिया। पू. श्री वर्धमानसागरजी महाराज आप ही की देन हैं। १६ वर्ष के छोटे से इस बालक को त्रिलोक पूज्य पद पर आसोन कराकर स्वय भी नत-मस्तक हुई। उदयपुर के वीर बालक 'सुरेश' (वर्तमान, मुनि श्री सभवसागरजो) को ७ वी प्रतिमा के व्रत स्थान देकर आ. श्री शिवसागरजी से दीक्षा लेने हेतु प्रेरणा-पूर्वक भेजा। जो आज रत्न बन गये। कलकत्ता की कु॰ सुशीला (पू श्री श्रुतसागरजी महाराज को सुपुत्री) तथा

श्रवणबेलगोल की कु० शीला जिन्हे गृह विरक्त कराकर आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत तथा २ प्रतिमा दिलाकर एव बासवाड़ा की कु० कला (सुपुत्री श्री पन्नालालजी तराटी) इन सभी को अपने अनुशासन में रखकर अध्ययन भी करा रही है। मुझ पर भी आपकी कृपा दृष्टि है जो कि श्री शिवसागरजी के सघ में रहने तथा आपसे अध्ययन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। पू. श्री १०८ अजितसागरजी महाराज को भी आप ही की सद्प्रेरणाए मिली जिससे वे आज जगत के गुरु होकर कल्याण के मार्ग पर अग्रसर है।

लगभग ८ वर्ष पूर्व (अजमेर) से संग्रहणी के रोग से ग्रसित है जिससे दिन में ७-८ बार दस्त होते है। जिस पर आहार भी अत्यन्त सयमपूर्ण, केवल दो रस (घृत एवं दुग्ध) तथा दो धान्य उसमें भी ५-६ वर्षों से तो केवल चावल ही लेती है। ऐसी स्थिति मे अत्यन्त जीर्ण शरीर होते हुए भी दिन में थोड़ा भी व्यर्थ बैठना आपको सुहाता नही है। सुबह से शामतक बराबर अध्ययन-अध्यापन मे जुटी रहती है। हालाकि उपवास तहुव कम करती है परन्तु ऐसा शायद ही कोई सप्ताह जाता होगा जिससे एक-दो अन्तराय न आती हो। थोड़े से दीक्षित जीवन काल में न्याय, व्याकरण, छद, अलंकार तथा सस्कृत के उच्च-तम ज्ञान के साथ प्राकृत के अलावा कन्नड़ भाषा की भी अच्छी जानकार है। सस्कृत तथा कन्नड़ भाषा में धाराप्रवाह प्रवचन करने में आप कुशल है। आपके द्वारा रचित कई हिन्दी

[illegible] तथा कानड़ी रचनाएं पुस्तक रूप में प्रकाशित हो चुकी हैं तथा हो रही है।

हम भगवान जिनेन्द्र देव से प्रार्थना करते है कि आप पूर्ण स्वस्थ होकर दीर्घायु होते हुए समस्त जीवो को कल्याण का मार्ग बताते रहे पुनः पुनः चरणार्विन्द में सविनय नमोस्तु-नमोस्तु-नमोस्तु।

बाल मुनि की आध्यात्मिक जीवन झांकी

मुक्ति पथ का पथिक............

(स्व० कविवर श्री पुष्पेंदुजी की 'वसत बहार' पुस्तक से उधृत)

मुक्तिपथ का पथिक ध्यान में लीन है
चूमने को चरण साधनाए चली,
भारती ने सजायी अमर आरती
शुचि यशोगान करती ऋचाए चली।
जड़ प्रकृति ने कहा—यह अरे कौन है
जो परिधि तोड़ता आज व्यवधान की,
शृङ्खलाएं जिसे बाध पाती नही
मान-अपमान अभिशाप वरदान की।
सकटो को चुनौति दिये जा रहा
यह तपस्वो तरुण एक त्यागी बना,
और आकर्षणों को तिरस्कृत किए
कौन है मौन यह वीतरागी बना।
ध्यान के सिन्धु को सोखने के लिए
वेग के संकटो की शिलाएं चली।
मुक्तिपथ का पथिक ध्यान में लीन है
चूमने को चरण साधनाएं चली।
वस्त्र-भूषण अलकार को त्यागकर

जिसने अम्बर दिशाओं का धारण किया,
वह दिगम्बर महामुनि तपोनिधि सरल
मोहमय भावना का निवारण किया।
उस महावीर के ध्यान की ढाल से
तीक्ष्णतम काम के बाण कुण्ठित हुए,
और ऋतुराज के मदभरे उपकरण
व्यर्थ से सिद्ध हो भू विलुंठित हुए ।
आत्म अनुभूति की शुची सुधाधार से
हारकर विषमयी वासनाएं चलीं
भूख की, प्यास की, शीत की, घाम की
हस्तियां हारकर गिड़गिड़ाने लगी
विष भरी क्रूर हिंसक पशु टोलियां
आक्रमण कर थकी सिर झुकाने लगीं।
उत्तरोत्तर विकासोन्मुखी वृत्ति का
स्पर्श पाकर गरल भी सरल हो गया।
घोर तमतोम से युक्त वातावरण
शारदी ज्योत्सना साधवल हो गया।
साधना सूर्य की ज्योति के पुंज से
लुप्त होती नियति की निशाएं चलीं,
मुक्तिपथ का पथिक ध्यान मे लीन है
चूमने को चरण अर्चनाएं चली।
त्याग की आग में राग ईंधन बना

आत्म अनुराग कचन निखरने लगा,

रूप सत्यं, शिवं, सुन्दरं का स्वयं

मन क्षितिज पर उषा सा उभरने लगा।

यह अखिल लोक आलोक से भर गया

दीप्ति ऐसी जगी विश्व कल्याण की,

भावना एक नूतन प्रवाहित हुई

विश्व के प्राण में आत्म कल्याण की।

पर विजय गीत गाती हुई लोक में

सत्य श्रद्धामयी वन्दनाए चली,

मुक्तिपथ का पथिक ध्यान में लीन है

चूमने को चरण अर्चनाएं चलीं।

विशेष—

इस पुस्तक के प्रारंभ में दी गई 'सिद्ध क्षेत्र वदना' भगवान महावीर स्वामी की 'निर्वाणबेला' में प्रति दिन पढने का महत्व रखती है। इसी कारण अन्यत्र इसका नाम 'उषा वदना' भी दिया गया है। यह प्रभाती रूप स्तुति 'उषा वदना' के नाम से स्वतत्र रूप से पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुकी है।

'वीर निर्वाण बेला' का तात्पर्य है 'उषा काल'

किंचित् ललाई लिये हुए प्रभातोन्मुख समय को 'उषा काल' कहते है। इसे सरस्वतीबेला एवं ब्राह्म मुहर्त भी कहते है। हमारे देश मे हर प्रातो मे प्राय. इस समय प्रभाती स्तोत्र आदि पाठ पढ़ने की आम प्रथा है।

दक्षिण प्रान्त में कन्नड तथा मराठी में भव्य जीवों को जाग्रत करने वाले मधुर एंव ललित पद वाले कई प्रकार के सुप्रभात स्तोत्र देखे जाते है। तदनुरूप ही यह वदना भी है।

प्राय: रात्रि में सुप्त बालक प्रात: जगाने पर रोने लग जाते है। जिससे उठते ही उस रुदन के कारण वह दिन अमागलिक सा हो जाता है। यदि माता पिता एव पारिवारिक जन—

उठो भव्य खिल रही है उषा, तीर्थ वदना स्तवन करो।
आर्तरौद्र दुर्ध्यान छोड़कर, श्री जिनवर का ध्यान करो।।

इन उपरोक्त पक्तियो से सुप्त जनो को जगावेगे तो दिवस मंगलमय होगा।

यदि आश्रम एवं गुरुकुल आदि स्थानों पर भी इस वदना को 'प्रभाती वदना' के स्थान पर उपयोग में लावेगे तो सचमुच में वहा का सम्पूर्ण दैनिक वातावरण परम सुखद एव्र मागलिक होगा।